वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 314
ISBN 978-93-80353-32-6

त्रिभुवन तिलक विधान

– रचयित्री –

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी

श्रुतपंचमी पर्व एवं कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जैन के 61वें जन्मदिवस
के शुभ अवसर पर प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र. फोन नं.- (01233) 280184, 292943
Website : www.jambudweep.org
E-mail : ravindrajain@jambudweep.org

COURTESY—JAIN BOOK DEPOT
C/o Shri Nabhi Kumar Manav Kumar Jain
C-4, Opp. PVR Plaza, Cannaught Place, New Delhi-1
Ph.-011-23416101-02-03/Website : www.jainbookdepot.com

प्रथम संस्करण	वीर निर्वाण संवत् 2536	मूल्य
1100 प्रतियाँ	ज्येष्ठ शुक्ला पंचमी	40/-रु.
	श्रुत पंचमी, 16 जून 2010	

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएं भी प्रकाशित होती रहती हैं।

-: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :-

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

-: मार्गदर्शन :-

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी

-: निर्देशन :-

धर्मदिवाकर पीठाधीश क्षुल्लकरत्न श्री मोतीसागर जी महाराज

-: सम्पादक :-

कर्मयोगी ब्र. रवीन्द्र कुमार जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

–कर्मयोगी ब्र.रवीन्द्र कुमार जैन

भगवान की पूजा प्रत्येक श्रावक के लिए प्रतिदिन का आवश्यक कर्त्तव्य माना गया है। पूजा और स्तुति के द्वारा ही भक्त भगवान की भक्ति कर सकता है, जिसका फल क्रम से स्वर्ग व मोक्ष की प्राप्ति है।

आचार्य श्री कुन्दकुन्ददेव जैसे आध्यात्मिक संतों तथा स्वामी समन्तभद्र जैसे तार्किक आचार्यों ने भी भगवान की भक्ति में तन्मय होकर अनेक स्तुति परक ग्रंथों की रचना की है, जिससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि वर्तमान पंचमकाल में शुद्धोपयोग के अभाव में शुभोपयोग की स्थापना हेतु भगवान की भक्ति मुनि और श्रावक दोनों के लिए परम आवश्यक है।

साहित्य सृजन के क्षेत्र में भक्ति संचार द्वारा ऐतिहासिक क्रान्ति लाने वाली राष्ट्रगौरव परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी सर्वदा यही कहती हैं कि इस कलिकाल में अपनी आत्मा की विशुद्धि हेतु अंतरंग ध्यान साधना से अधिक उपयोगी पूजन विधान के माध्यम से भगवान की भक्ति करना है क्योंकि कालदोष के कारण ध्यान साधना में कोई भी जीव उत्कृष्ट अवस्था को प्राप्त करने में असमर्थ होता है। जीव के जन्म-जन्मांतरों का पुण्य संचित होकर जब एक साथ उदय में आता है तब जिनधर्म एवं जिनवाणी सुनने का साधन प्राप्त होता है जिससे शुभोपयोग में जीव का समय व्यतीत होता है अन्यथा तो सभी संसारी प्राणी दिन रात अशुभोपयोग अर्थात् पाप क्रियाओं में संक्लेशित होकर अपार दुख उठाते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि अशुभोपयोग से बचने के लिए प्रत्येक श्रावक को अपना समय शुभोपयोग में व्यतीत करने हेतु भगवान की भक्ति, पूजा, स्तोत्रपाठ, तीर्थयात्रा वगैरह करना चाहिए, जो शुभोपयोग के अंग हैं।

वर्तमान में जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की कलम से पूजन विधान रचना के क्रम में लगभग 50 की संख्या में बड़े-बड़े विधानों की रचना हुई है, जिसमें इन्द्रध्वज, कल्पद्रुम, सर्वतोभद्र आदि प्रमुख हैं। इसी श्रृँखला में अनेकों लघु विधानों की भी रचना पूज्य माताजी के द्वारा हुई है, उसी क्रम में यह नूतन विधान ''त्रिभुवन तिलक विधान है'' जिसे करके भव्य जीवों को निश्चित ही कर्मनिर्जरा करने का एक सुन्दर माध्यम मिलेगा। यह विधान प्रत्येक करने-कराने, सुनने-सुनाने वाले जीवों की कर्म निर्जरा में सहयोगी बने तथा एक दिन उन्हें भी अपनी आत्मा को परमात्मा बनाने में कारणभूत सिद्ध होवे, यही मंगल भावना है।

प्रस्तावना

–ब्र. कु. इन्दु जैन (संघस्थ)

जैनागम में ऊर्ध्व, मध्य और अधो ऐसे तीन लोक माने गये हैं, इन तीनों लोकों में आठ करोड़ छप्पन लाख सत्तानवे हजार चार सौ इक्यासी जिनमंदिर हैं, जिनमें नौ सौ पच्चीस करोड़ त्रेपन लाख सत्ताइस हजार नौ सौ अड़तालीस अकृत्रिम जिनप्रतिमाएँ हैं। तीनों लोकों में इनका विभाग करने से अधोलोक में सात करोड़ बहत्तर लाख जिनगृह, मध्यलोक में चार सौ अट्ठावन जिनमंदिर तथा ऊर्ध्वलोक में चौरासी लाख सत्तानवे हजार तेईस जिनमंदिर हैं। ये सभी जिनमंदिर अकृत्रिम हैं, कृत्रिम मंदिर ढाई द्वीप की पन्द्रह कर्मभूमियों में ही हैं। इन पंद्रह कर्मभूमियों में पाँच विदेह संबंधी एक सौ साठ भेद हो जाने से एक सौ सत्तर कर्मभूमियाँ हो जाती हैं और इन कर्मभूमियों में ही अर्हंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, जिनधर्म, जिनागम, जिनचैत्य और जिनचैत्यालय ये नवदेवता होते हैं। तीन लोक के अग्रभाग पर सिद्धशिला है, जहाँ इसी कर्मभूमि से निर्वाण धाम को प्राप्त हुए अनंतानंत सिद्ध परमेष्ठी विराजमान हैं। जिनकी पूजा, भक्ति, वंदना करने से अनंतगुणी पापकर्मों की निर्जरा होकर महान पुण्य का बंध होता है।

वर्तमान जैन जगत गौरवशाली है जिसे बीसवीं शताब्दी की प्रथम बालब्रह्मचारिणी परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के रूप में ऐसा कोहिनूर हीरा प्राप्त हुआ है, जिसकी प्रभा ने इस जैनागम को और अधिक प्रकाशमान कर उसकी रश्मियाँ सर्वत्र बिखेर दी हैं, जिससे जैनागम के अनेक कठिन एवं अछूते विषयों से भी जनमानस सहज में ही परिचित हो सका है। 300 से भी अधिक ग्रंथों की लेखिका पूज्य माताजी की शुद्ध प्रासुक लेखनी ने जन-जन को भक्तिगंगा में अवगाहन करने हेतु जहाँ अनेकों वृहत् विधानों को प्रदान किया, वहीं अनेकों लघु विधानों को प्रतिदिन करके भक्त पुण्यवर्धन के साथ-साथ अपने मनवांछित कार्यों की सिद्धि करते देखे जाते हैं। भक्ति संगीत की उसी श्रृँखला में प्रस्तुत ''त्रिभुवनतिलक विधान'' है, जिसके द्वारा पूजक सहजता से तीन लोक में विराजमान कृत्रिम-अकृत्रिम जिनमंदिर और जिनचैत्यालयों की वंदना कर सातिशय पुण्य का संचय कर सकेंगे।

इस पूजा विधान में कुल 8 पूजाएँ हैं, जिसमें प्रथम समुच्चय पूजा है, द्वितीय पूजा में 30 अर्घ्य 4 पूर्णार्घ्य, तृतीय पूजा में 11 अर्घ्य 1 पूर्णार्घ्य, चतुर्थ पूजा में 9 अर्घ्य 1 पूर्णार्घ्य, पंचम पूजा में 24 अर्घ्य 6 पूर्णार्घ्य, छठी पूजा में 10 अर्घ्य 2 पूर्णार्घ्य, सातवीं पूजा में 14 अर्घ्य 3 पूर्णार्घ्य, आठवीं पूजा में 16 अर्घ्य 1 पूर्णार्घ्य है। इस प्रकार कुल 114 अर्घ्य और 18 पूर्णार्घ्य हैं।

इस प्रकार भक्तिगंगा में अवगाहन कराने वाला यह विधान प्रत्येक भव्य जीव के सर्व अमंगल, दुख, शोकादि को दूर कर सर्व अभ्युदय को प्रदान करने वाला होवे और इहलौकिक सुख के साथ-साथ एक दिन निर्वाण सुख को प्राप्त कराने में समर्थ होवे, यही शुभेच्छा है।

भजन

तर्ज–जंगल जंगल धूम मची है......

जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर से, बात सुनी है।
तीन लोक की रचना सुन्दर, वहाँ बनी है।-2
जम्बूद्वीप से बात सुनी है, बात सुनी है, बात सुनी है।
रचना सुन्दर, वहाँ बनी है, वहाँ बनी है।।टेक.।।

ज्ञानमती, माताजी की, प्रेरणा मिली है।
इसीलिये, भक्तों में नव, चेतना खिली है।-2
मैंने टी.वी. के माध्यम से, बात सुनी है।
अरे, तीन लोक की रचना सुन्दर वहाँ बनी है।-2
तीन लोक की रचना सुन्दर, वहाँ बनी है।।1।।

अधोलोक में, नरक भयावह, देखो कितने।
पापकर्म, करने वाले, जाते हैं उनमें।।
मध्यलोक से मोक्षगमन की, बात सुनी है।
अरे, तीन लोक की रचना सुन्दर वहाँ बनी है।-2
तीन लोक की रचना सुन्दर, वहाँ बनी है।।2।।

ऊर्ध्वलोक में, स्वर्ग देखकर, मन ललचाता।
पुण्यकर्म, करने से मानव, स्वर्ग में जाता।।
अर्धचन्द्रसम सिद्धशिला की, बात सुनी है।
अरे, तीन लोक की रचना सुन्दर वहाँ बनी है।-2
तीन लोक की रचना सुन्दर, वहाँ बनी है।।3।।

यूँ तो सिद्धशिला से वापस, कोई न आता।
शाश्वतकाल, वहीं आत्मा, सुख-शांती पाता।।
उस सुख की तुलना संसार में, कहीं नहीं है।
अरे, तीन लोक की रचना सुन्दर वहाँ बनी है।-2
तीन लोक की रचना सुन्दर, वहाँ बनी है।।4।।

कृत्रिम सिद्धशिला का भाव से, दर्शन करना।
सदा हृदय में, सिद्ध प्रभू का, सुमिरन करना।।
यही 'चंदनामती' आज, भावना बनी है।
अरे, तीन लोक की रचना सुन्दर वहाँ बनी है।-2
तीन लोक की रचना सुन्दर, वहाँ बनी है।।5।।

विधान की रचयित्री, राष्ट्रगौरव, गणिनीप्रमुख, आर्यिकाशिरोमणि

श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

भारत की वसुन्धरा सदैव से तपस्या, त्याग एवं संयम की भूमि रही है। भगवान ऋषभदेव, राम, महावीर की यह भूमि आज भी ऐसे महान व्यक्तित्वों से सुशोभित है कि जो अपने जीवन में ही ऐतिहासिक बन जाते हैं।

ऐसा ही एक महान व्यक्तित्व है– वर्तमान दिगम्बर जैन समाज की सबसे प्राचीन दीक्षित साध्वी-पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी। सन् 1934 में शरदपूर्णिमा के दिन जिला बाराबंकी (उ.प्र.) के टिकैतनगर ग्राम में माता मोहिनी एवं पिता श्री छोटेलाल जैन के दाम्पत्य जीवन के प्रथम पुष्प के रूप में कन्यारत्न 'मैना' का जन्म हुआ। छोटी-सी आयु से ही अपनी माँ की प्रेरणावश जैन ग्रंथों के स्वाध्याय द्वारा इस बालिका ने अपने वैराग्य को भलीभाँति दृढ़ कर लिया और 18 वर्ष की अल्प आयु में शरदपूर्णिमा के दिन ही परिवार के प्रबल विरोध के बावजूद भी आजन्म ब्रह्मचर्यव्रत एवं गृहत्याग के कठिन नियम धारण कर लिये। सन् 1953 में श्री महावीर जी (राज.) अतिशय क्षेत्र पर आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से आपने क्षुल्लिका दीक्षा लेकर 'वीरमती' नाम प्राप्त किया। पुनः 1956 में बीसवीं सदी के प्रथम आचार्य चारित्रचक्रवर्ती श्री शांतिसागर जी महाराज के प्रथम पट्टाधीश शिष्य आचार्यश्री वीरसागर जी महाराज से माधोराजपुरा (राज.) में आपने आर्यिका दीक्षा लेकर 'ज्ञानमती' नाम प्राप्त किया। ज्ञान प्राप्ति हेतु अध्ययन-अध्यापन एवं स्वाध्याय के प्रति आपकी विशेष अभिरुचि देखकर ही गुरुवर ने आपको यह नाम प्रदान किया था। दीक्षा के प्रारंभिक वर्षों में आपने सर्वप्रथम संस्कृत व्याकरण एवं जैन आगम का तलस्पर्शी ज्ञान प्राप्त किया तथा साथ ही अपनी लेखनी का शुभारंभ भी कर दिया।

57 वर्षों से साधनारत इन महान साध्वी ने अब तक लगभग 250 से भी अधिक ग्रंथों का सृजन किया है। संस्कृत, हिन्दी, प्राकृत, कन्नड़ इत्यादि भाषाओं की प्रकाण्ड विदुषी पूज्य माताजी की काव्य प्रतिभा भी अद्वितीय है। जिनेन्द्र भक्ति के रस से भरे हुए न जाने कितने ही पूजन-विधानों की रचना पूज्य माताजी ने अपनी लेखनी द्वारा की है। सन् 1995 में डॉ. राम मनोहर लोहिया

अवध विश्वविद्यालय (फैजाबाद) ने पूज्य माताजी की विराट ज्ञान साधना को देखकर जैन इतिहास में प्रथम बार किसी साध्वी को 'डी.लिट्.' की मानद उपाधि प्रदान की।

कर्मठता, दृढ़संकल्प, अनुशासन के साथ-साथ वात्सल्य की प्रतिबिम्ब पूज्य माताजी ने कौरवों-पाण्डवों की राजधानी हस्तिनापुर (मेरठ-उ.प्र.) में अपनी प्रेरणा से जैन भूगोल की अद्वितीय रचना-'जम्बूद्वीप' का निर्माण कराया है।

प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की दीक्षा एवं केवलज्ञान कल्याणक भूमि-प्रयाग (इलाहाबाद) में 'तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ' का भव्य निर्माण भी पूज्य माताजी की सृजनशक्ति का ही सुन्दर प्रतिफल है। इसी प्रकार भगवान महावीर जन्मभूमि-कुण्डलपुर (नालंदा) में नंद्यावर्त महल तीर्थ का भव्य निर्माण पूज्य माताजी की प्रेरणा एवं ससंघ सानिध्य में मात्र 22 माह के अल्प अन्तराल में हुआ है। भगवान महावीर के अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह, अनेकांत इत्यादि विश्वोपयोगी सिद्धान्तों की गूंज को समस्त विश्व में प्रसारित करने वाला भगवान महावीर जन्मभूमि पर स्थापित नंद्यावर्त महल परिसर सभी लोगों के लिए आकर्षण का विशेष केन्द्र बिन्दु सिद्ध हो रहा है।

2600 वर्ष पूर्व कुण्डलपुर (नालंदा) की जो धरती अहिंसा के अवतार भगवान महावीर के जन्मकल्याणक से महान उत्साह एवं हर्ष को प्राप्त हुई थी वह काल के थपेड़ों से भले ही विस्मृत जैसी हो गयी हो, परन्तु जैन समाज के श्रद्धालुओं का वहाँ जाना हमेशा से जारी रहा और अब पूज्य ज्ञानमती माताजी के महान उपकार स्वरूप यह जन्मभूमि पुनः इस प्रकार जगमगा उठी है कि आने वाला भविष्य सदैव इसकी चमक से प्रभावित रहेगा।

पूज्य माताजी की प्रेरणा से जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (1982) एवं भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार रथ (1998) का देशव्यापी प्रवर्तन सम्पन्न हुआ एवं कुण्डलपुर से प्रवर्तित भगवान महावीर ज्योति रथ (2003) का प्रवर्तन सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ है। इन रथों के द्वारा सम्पूर्ण भारत में अहिंसामयी सिद्धान्तों की व्यापक प्रभावना हुई।

शैक्षणिक क्षेत्र में अनेकानेक राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठियाँ-सेमिनार इत्यादि पूज्य माताजी की प्रेरणा द्वारा समय-समय पर सम्पन्न हुए हैं। पूज्य माताजी के विराट व्यक्तित्व का अभिनंदन करने के लिए समाज ने उन्हें समय-समय पर युगप्रवर्तिका, चारित्रचन्द्रिका, न्याय प्रभाकर, आर्यिकारत्न, गणिनीप्रमुख,

युगनायिका, राष्ट्रगौरव, विश्वविभूति, वाग्देवी, सिद्धान्तचक्रेश्वरी जैसी उपाधियों से सम्मानित करके स्वयं को गौरवान्वित अनुभव किया है। वर्तमान में महाराष्ट्र प्रान्त के मांगीतुंगी पर्वत पर विश्व की सबसे ऊँची 108 फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की प्रतिमा का निर्माण पूज्य माताजी की प्रेरणा से हो रहा है।

ब्रह्मचर्य एवं चारित्र के तेज को सर्वत्र बिखेरने वाली पूज्य ज्ञानमती माताजी भारतीय संस्कृति की महान धरोहर हैं, जिन्होंने 15 अप्रैल 2006 (वैशाख कृ. दूज) को अपनी आर्यिका दीक्षा के 50 वर्षों को पूर्ण किये और जैन समाज के इतिहास में प्रथम बार किसी आर्यिका का दीक्षा स्वर्ण जयंती महोत्सव राष्ट्रीय स्तर पर मनाया गया।

21 दिसम्बर 2008 को जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में पूज्य माताजी की प्रेरणा से आयोजित विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का उद्घाटन भारत की प्रथम महिला राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील के करकमलों से हुआ और सन् 2009 ''शांतिवर्ष'' के रूप में घोषित हुआ। राष्ट्रपति जी ने जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में पधारकर पूज्य माताजी का आशीर्वाद प्राप्त किया।

दीर्घकालीन तपस्विनी ऐसी पूज्यनीया माताजी ने अपने जीवन के 75 वर्ष पूर्ण किए, जिसे सन् 2008 में राष्ट्रीय स्तर पर ''हीरक जयंती महोत्सव'' के रूप में मनाया गया। चतुर्मुखी प्रतिभा की धनी पूज्य माताजी के श्रीचरणों में भावभीना कोटिशः नमन है।

वास्तव में आज के कलिकाल में भी आध्यात्मिक ज्ञान, चारित्र, साधना एवं मोक्षपथ को साकार करने वाले गुरुओं का जितना अभिनंदन किया जाये, उतना कम है। जो बिना कुछ कहे अपनी मुद्रा द्वारा ही शांति, संयम, सदाचार का उपदेश देते हैं ऐसे साधु इस भारत वसुन्धरा की शान हैं और जो भी प्राणीगण परमसौभाग्य से उनके चरणों में आश्रय प्राप्त कर लेते हैं, वे भी अपने जीवन को सही अर्थों में सार्थक कर लेते हैं।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान का परिचय

-पीठाधीश क्षुल्लक मोतीसागर

जिस हस्तिनापुर में इस संस्थान द्वारा राष्ट्रीय स्तर पर कार्य कलाप चल रहे हैं, प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की पारणा, कौरव-पाण्डव की राजधानी, दर्शन प्रतिज्ञा में प्रसिद्ध मनोवती का इतिहास आदि पौराणिक कथानकों से जुड़ी वह हस्तिनापुर नगरी एक ऐतिहासिक एवं पौराणिक नगरी है। **सन् 1972 में** पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के नाम से दिल्ली में इस संस्था का जन्म हुआ।

सन् 1974 से हस्तिनापुर में निर्माण कार्य प्रारंभ किया गया और अब तक वहाँ अनेक भव्य रचनाएं, मंदिर, कमरे, फ्लैट, कोठियां, भोजनालय, टंकी आदि बन चुके हैं। निर्माण के अतिरिक्त संस्थान के द्वारा शिक्षा एवं धर्म प्रचार-प्रसार हेतु शिक्षण शिविर, सेमिनार, अंतर्राष्ट्रीय सेमिनार, सम्मेलन आदि के आयोजन भी होते रहते हैं। पूज्य माताजी एवं आर्यिका श्री चंदनामती माताजी द्वारा लिखित चारों अनुयोगों एवं धर्मप्रभावना के समाचारों से सहित सम्यग्ज्ञान मासिक पत्रिका का प्रकाशन **सन् 1974** से बराबर निर्बाध गति से चल रहा है। संस्थान के अंतर्गत ही **सन् 1972** में स्थापित वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला से **300** से भी अधिक ग्रंथ लाखों की संख्या में प्रकाशित हो चुके हैं। यहां जम्बूद्वीप पुस्तकालय, णमोकार महामंत्र बैंक, गणिनी ज्ञानमती शोधपीठ आदि के द्वारा धार्मिक शैक्षणिक एवं पारमार्थिक कार्यक्रम चलते रहते हैं। सन् 1975 से प्रारंभ पंचकल्याणकों में अब तक अनेक पंचकल्याणक प्रतिष्ठाएं एवं प्रति 5 वर्षों में होने वाले जम्बूद्वीप महामहोत्सव में से 4 महोत्सव हो चुके हैं। इस संस्थान द्वारा जहाँ पूज्य माताजी की प्रेरणा से सन् 1982 में दिल्ली से स्व. प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी द्वारा उद्घाटित जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति रथ का 1045 दिनों तक सम्पूर्ण भारत में भ्रमण एवं हस्तिनापुर में उसकी अखण्ड स्थापना हुई, सन् 1998 में प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा उद्घाटित भगवान ऋषभदेव समवसरण श्रीविहार द्वारा अहिंसामयी सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार हुआ। वहीं भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) से महामहिम राज्यपाल बिहार प्रान्त द्वारा प्रवर्तित **''भगवान महावीर ज्योति''** रथ के भारत भ्रमण से जनमानस भगवान महावीर के विषय में आगमसम्मत ज्ञान से परिचित हुआ है। जम्बूद्वीप स्थल पर समय-समय पर भव्य दीक्षाएं भी सम्पन्न हुई हैं। इसी संस्थान द्वारा दिल्ली के लालकिला मैदान में 4 फरवरी सन् 2000 को प्रधानमंत्री श्री वाजपेयी द्वारा उद्घाटित ''भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव'' सम्पूर्ण देश एवं विदेशों में मनाया गया। जिसके अंतर्गत अनेक संगोष्ठियाँ, भगवान ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ निर्माण आदि कार्यक्रम हुए। सन् 2000-2001 में संस्थान द्वारा पूज्य माताजी की प्रेरणा से भगवान ऋषभदेव की दीक्षा एवं केवलज्ञान भूमि प्रयाग-

इलाहाबाद में बनारस हाइवे पर **''तीर्थंकर ऋषभदेव दीक्षातीर्थ''** का नवनिर्माण हुआ है तथा 6 अप्रैल सन् 2001 को ही प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा उद्घाटित राष्ट्रीय स्तर पर सम्पूर्ण भारतवर्ष में मनाए जाने वाले भगवान महावीर 2600वाँ जन्मकल्याणक महोत्सव वर्ष में पूज्य माताजी द्वारा रचित ''विश्वशांति महावीर विधान'' का विराट आयोजन प्रथम राष्ट्रीय आयोजन के रूप में राजधानी दिल्ली के फिरोजशाह कोटला मैदान में अक्टूबर 2001 में सम्पन्न हुआ। उसी जन्मकल्याणक महोत्सव के अंतर्गत सन् 2003-2004 में संस्थान द्वारा पूज्य माताजी की प्रेरणा से भगवान महावीर की जन्मभूमि कुण्डलपुर का विकास कार्य द्रुतगति से हुआ है। ''नंद्यावर्त महल'' नामक तीर्थ परिसर वहाँ का विशेष दर्शनीय स्थल पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र है।

कुण्डलपुर विकास संपन्न होने के पहले ही पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने आगामी वर्ष 2005 को ''भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव वर्ष'' के रूप में मनाने का सारे देश को आह्वान किया और प्रेरणा दी। तदुपरांत पूज्य माताजी ससंघ ने कुण्डलपुर से 14 नवम्बर 2004 को भगवान पार्श्वनाथ की जन्मभूमि बनारस के लिए विहार किया और पूज्य माताजी के सानिध्य में बनारस में भगवान पार्श्वनाथ की जन्मजयंती 6 जनवरी 2005 को इस पार्श्वनाथ महोत्सव वर्ष का जोर-शोर के साथ सारे देश की जनता के बीच उत्तरप्रदेश के लोक निर्माण मंत्री-श्री शिवपाल सिंह यादव एवं अन्य अतिथियों द्वारा उद्घाटन किया गया। इस महोत्सव वर्ष के अंतर्गत सर्वप्रथम लम्बे समय से प्रतीक्षित भगवान श्रेयांसनाथ की जन्मभूमि सिंहपुरी-सारनाथ में उनकी विशाल प्रतिमा का पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव भव्यता के साथ सम्पन्न हुआ। तदुपरांत टिकैतनगर में भगवान महावीर पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव में पधारे उत्तरप्रदेश के लोकप्रिय मुख्यमंत्री माननीय श्री मुलायम सिंह यादव ने भगवान पार्श्वनाथ की प्रतिमा के समक्ष दीप प्रज्ज्वलित कर 'पार्श्वनाथ वर्ष' का शुभारंभ किया और भगवान पार्श्वनाथ की वह प्रतिमा ''पार्श्वनाथ दि. जैन इण्टर कालेज'' के परिसर में स्थापित की गई है। इसी श्रृंखला में सारे देश में 3 वर्ष तक भगवान पार्श्वनाथ तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव विविध आयोजनों के साथ मनाया गया, जिसका समापन भगवान पार्श्वनाथ की केवलज्ञान भूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तिखाल वाले बाबा के महामस्तकाभिषेकपूर्वक 4 जनवरी 2008 को हुआ।

21 दिसम्बर 2008 का दिवस संस्थान के लिए विशेष गौरवपूर्ण एवं ऐतिहासिक रहा, जब गणतंत्र भारत की महामहिम राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटिल पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी का शुभाशीर्वाद लेने जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर पधारीं और विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का उद्घाटन किया।

इस प्रकार आप सबके सहयोग से संचालित हो रहा दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान अपनी चतुर्मुखी योजनाओं से समाज को सदैव लाभान्वित करता रहे यही मंगल कामना है।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के सहयोगी

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अन्तर्गत "वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला" की स्थापना सन् 1974 में हुई। तब से अब तक लाखों की संख्या में ग्रन्थों का प्रकाशन हो चुका है और निरन्तर हो रहा है। ग्रंथमाला से पाठकों को ग्रन्थ कम कीमत में प्राप्त हो सकें, इस दृष्टि से ग्रन्थमाला में एक संरक्षक योजना अगस्त सन् 1990 से प्रारंभ की गई है। इस योजना के अन्तर्गत निम्न महानुभाव अब तक संरक्षक बनकर अपना सहयोग प्रदान कर चुके हैं।

शिरोमणि संरक्षक

1. **श्रीमती निर्मला जैन ध.प. स्व. श्री प्रेमचन्द्र जैन, तत्पुत्र प्रदीप कुमार जैन, खारी बावली, दिल्ली-6।**
2. **श्रीमती सुमन जैन ध.प. श्री दिग्विजय सिंह जैन, इंदौर।**
3. **श्री महावीर प्रसाद जैन संघपति, जी-19, साऊथ एक्सटेन्शन, नई दिल्ली।**
4. **श्री महेन्द्र पाल हरेन्द्र कुमार जैन, सूरजमल विहार, दिल्ली।**
5. **श्रीमती मोहनी जैन ध.प. श्री सुनील जैन, प्रीत विहार, दिल्ली।**
6. **श्री देवेन्द्र कुमार जैन (धारूहेड़ा वाले) गुड़गाँव (हरि.)।**
7. **श्रीमती शारदा रानी जैन ध.प. स्व. रिखबचंद जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।**
8. **डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)**
9. **श्रीमती संगीता जैन ध.प. श्री संजीव कुमार जैन, शेरकोट (बिजनौर) उ.प्र.**
10. **श्री अनिल कुमार जैन, दरियागंज, दिल्ली**
11. **श्री बी.डी. मदनाइक, मुम्बई**
12. **श्री धनकुमार जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-92।**
13. **श्री जितेन्द्र कुमार जैन एवं श्रीमती सुनीता जैन कोटड़िया, फ्लोरिडा, यू.एस.ए.**
14. **श्रीमती विमला देवी जैन ध.प. श्री ओमप्रकाश जैन, स्वालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।**
15. **श्री अमित जैन एवं संभव जैन सुपुत्र श्रीमती अनीता जैन ध.प. श्री मूलचंद जैन पाटनी, दिसपुर (कामरूप) आसाम।**
16. **श्रीमती अजित कुमारी जैन ध.प. श्री महेन्द्र कुमार जैन, ओबेदुल्लागंज (रायसेन) म.प्र.।**
17. **श्री नाभिकुमार जैन, जैन बुक डिपो, सी-4, पी.वी.आर. प्लाजा के पीछे, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली।**

परम संरक्षक

1. **श्री माँगीलाल बाबूलाल पहाड़े, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।**
2. **डॉ. प्रकाशचन्द्र जैन, 792 विवेकानंदपुरी, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।**
3. **श्री सुमत प्रकाश जैन, गज्जू कटरा, शाहदरा, दिल्ली।**
4. **श्री सुनील कुमार जैन, द्वारा-सुनील टैक्सटाईल्स, सरधना (मेरठ) उ.प्र.।**
5. **श्री प्रकाश चंद अमोलक चंद जैन सर्राफ, सनावद (म.प्र.)।**
6. **श्री प्रद्युम्न कुमार जवेरी, रोकड़ियालेन, बोरीवली (वेस्ट) मुंबई।**
7. **श्रीमती उर्मिला देवी ध.प. श्री कान्ती प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।**
8. **श्रीमती उषा जैन ध.प. श्री विमल प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।**
9. **श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले) , गांधीनगर, दिल्ली।**
10. **श्रीमती सरिता जैन ध.प. श्री राजकुमार जैन, किदवई नगर, कानपुर।**
11. **स्व. श्रीमती कैलाशवती ध.प. श्री कैलाश चन्द्र जैन , तोपखाना बाजार, मेरठ।**

12. **श्री भानेन्द्र कुमार जैन, द्वारा-श्री विद्या जैन, भगत सिंह मार्ग, जयपुर।**
13. **श्री प्रदीप कुमार शान्तिलाल बिलाला, अनूपनगर, इंदौर, (म.प्र.)।**
14. **श्री सुरेशचंद पवन कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।**
15. **श्री नथमल पारसमल जैन, कलकत्ता-7।**
16. **श्रीमती स्व. शांताबाई ध.प. श्री कमलचंद जैन, सनावद (म.प्र.)।**
17. **श्री रूपचंद जैन कटारिया, दिल्ली**
18. **श्री आशु जैन, कालका जी, नई दिल्ली**

संरक्षक

1. स्व. श्री अनन्तवीर्य जैन एवं स्व. श्रीमती आदर्श जैन के सुपुत्र श्री मनोज कुमार जैन, मेरठ।
2. श्रीमती राजूबाई मातेश्वरी श्री शिखर चन्द भाई देवेन्द्र कुमार लखमी चन्द जैन, सनावद (म.प्र.)।
3. श्री चिमनलाल चुन्नीलाल दोशी, कीका स्ट्रीट, मुम्बई।
4. श्रीमती अरुणाबेन मन्नूभाई कोटड़िया, सी.पी. टैंक रोड, मुम्बई।
5. श्रीमती ताराबेन चन्दूलाल दोशी, फ्रेन्च ब्रिज, मुम्बई।
6. श्री रतिलाल चुन्नीलाल दोशी, मुम्बई।
7. स्व. श्रीमती मथुराबाई खुशाल चन्द्र जैन, द्वारा-श्री रतन चन्द खुशाल चन्द्र गाँधी के सुपुत्र श्री धन्य कुमार, अशोक कुमार, शिरीश कुमार, धर्मराज गाँधी फलटन (महा.)।
8. श्री शांतिलाल खुशाल चन्द गाँधी, फलटन (सातारा) महा.।
9. श्री अनन्त लाल फूलचन्द फड़े, अकलूज (सोलापुर) महा.।
10. श्री हीरालाल माणिकलाल गाँधी, अकलूज (सोलापुर) महा.।
11. श्री जयकुमार खुशालचंद गाँधी, अकलूज (सोलापुर) महा.।
12. श्रीमती बदामी देवी मातेश्वरी श्री पदम कुमार जैन गंगवाल, कानपुर (उ.प्र.)।
13. श्रीमती कमलादेवी ध.प. स्व. श्री महेन्द्र कुमार जैन, घण्टे वाले हलवाई, दरियागंज,नई दिल्ली।
14. श्रीमती उषादेवी ध.प. श्री श्रवण कुमार जैन, चावड़ी बाजार, दिल्ली।
15. श्री मुकेश कुमार जैन, कटरा शहंशाही, चाँदनी चौक, दिल्ली।
16. श्री हुकमीचंद मांगीलाल शाह, धानमंडी, उदयपुर (राज.)
17. श्री किरण चन्द्र जैन, कटरा धूलियान, चाँदनी चौक, दिल्ली।
18. श्रीमती विमलादेवी ध.प. श्री महावीर प्रसाद जैन इंजी. विवेक विहार, दिल्ली
19. श्रीमती उषादेवी ध.प. श्री अशोक कुमार जैन (खेकड़ा निवासी), बहराइच (उ.प्र.)।
20. श्रीमती लीलावती ध.प. श्री हरीश चन्द्र जैन, शकरपुर, दिल्ली।
21. श्री दुलीचन्द जैन, बाहुबली एन्कलेव, दिल्ली।
22. श्री रतिलाल केवलचन्द गाँधी की पुण्य स्मृति में, पापुलर परिवार, सूरत (गुज.)।
23. श्रीमती भंवरीदेवी ध.प. श्री सदासुख जैन पांड्या की समृति में इन्दर चन्द सुमेरमल जैन पांड्या शिलांग (मेघालय)।
24. श्रीमती सोहनीदेवी ध.प. श्री तनसुखराय सेठी, फैन्सी बाजार, गौहाटी (आसाम)।
25. श्रीमती धापूबाई ध.प. श्री कस्तूर चन्द जैन, रामगंज मण्डी (राज.)।
26. श्री मिट्ठनलाल चन्द्रभान जैन, कविनगर गाजियाबाद (उ.प्र.)।
27. श्रीमती शकुन्तलादेवी ध.प. श्री सुरेशचंद जैन (बर्तन वाले), खुड़बुड़ा मोहल्ला,देहरादून (उ.प्र.)।
28. श्री देवेन्द्र कुमार गुणवन्त कुमार टोंग्या, बड़नगर (म.प्र.)।
29. श्री दिगम्बर जैन समाज, तहसील फतेहपुर (बाराबंकी) उ.प्र.।

30. श्री मन्नालाल रामलाल जैन डूंगरवाला, भानपुरा (मन्दसौर) म.प्र.।
31. श्री इन्दर चन्द कैलाश चंद चौधरी, सनावद (म.प्र.)।
32. श्री प्रकाश चन्द अमोलक चन्द जैन सर्राफ, सनावद (म.प्र.)।
33. स्व. श्री विमल चन्द जैन, रखबचन्द दसरथ सा, सनावद (म.प्र.)।
34. श्री आजाद कुमार जैन शाह (सनावद वाले), इन्दौर (म.प्र.)।
35. श्रीमती सुषमा जैन ध.प. श्री राकेश कुमार जैन, मवाना (मेरठ) उ.प्र.।
36. श्रीमती कुसुम जैन ध.प. श्री रमेशचन्द जैन, किशनपुरी, बागपत रोड, मेरठ।
37. श्रीमती किरण जैन ध.प. श्री पदम प्रसाद जैन एडवोकेट, मेरठ (उ.प्र.)।
38. श्रीमती विमलादेवी ध.प. श्री जिनेन्द्रप्रसाद जैन ठेकेदार, टोडरमल रोड, नई दिल्ली।
39. श्रीमती क्षमादेवी जैन, मधुबन, दिल्ली।
40. श्रीमती कमलादेवी ध.प. श्री राजेन्द्र कुमार जैन टोडरका, ठाणे (महा.)।
41. श्री अजित प्रसाद जैन बब्बेजी, श्री राजकुमार श्रवण कुमार जैन, लखनऊ।
42. श्री प्रभा चन्द गोधा, 45 भगत वाटिका, सिविल लाइन, जयपुर-6 (राज.)।
43. श्री गोपीचन्द विपिन कुमार जैन, सरधना टैन्ट हाउस, गंजमंडी, सरधना।
44. श्रीमती रतनसुन्दरी देवी ध.प. श्री वीरचन्द जैन (चिकन वाले), चूड़ीवाली गली,चौक बाजार, लखनऊ।
45. डॉ. सुभाषचन्द जैन, रातानाड़ा क्लीनिक, रातानाड़ा बाजार, जोधपुर (राज.)।
46. श्री प्रमोद कुमार जैन (मुजफ्फरनगर वाले) 35 एच.वी.रोड, न्यू मार्केट, थरपकना,रांची (बिहार)।
47. श्री विजेन्द्र कुमार जैन, के.-1/20 मॉडल टाउन, दिल्ली।
48. श्री कैलाश चंद जैन, 45 भगत वाटिका, सिविल लाइन, जयपुर (राज.)।
49. श्री सुभाषचंद जैन, श्री दि. जैन पार्श्वनाथ चैत्यालय, 405 डॉ. मुखर्जी नगर, दिल्ली।
50. श्री सुभाष चन्द जैन सर्राफ, टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.।
51. श्री चन्द्रसेन जैन, द्वारा-सुमेरचन्द, चन्द्रसेन जैन, सब्जी मण्डी, नहटौर (बिजनौर)।
52. श्री सुधीर कुमार जैन जे.ई., नन्द किशोर जैन, शारदा नहर खण्ड, शाहजहाँपुर।
53. श्री सुकुमालचंद जैन, मोती ट्रेडिंग कम्पनी, टी.आर. फुकन रोड, फैन्सी बाजार, गौहाटी।
54. श्री अनिल पुलकित सेठी, बी 1/122, फेज-2, अशोक विहार, दिल्ली-110052।
55. श्री चन्द्रमोहन बंसल, 11, पूसा रोड, करोलबाग, नई दिल्ली-5।
56. श्री गिरधर प्रसाद आमोद प्रसाद जैन, जैन वस्त्रालय, काली मार्केट, सिवान (बिहार)।
57. श्री सतीश चन्द जैन, 31 सिविल लाइन, म.नं.-10, सेक्टर-2, टाइप-5 झांसी।
58. श्री स्वरूप चन्द कासलीवाल, नया बाजार, अजमेर (राज.)।
59. श्री हुलास चन्द सेठी, अयोध्या शुगर मिल्स, राजा का सहसपुर, बिलारी (उ.प्र.)।
60. श्रीमती किरण देवी जैन ध.प. श्री नरेन्द्र कुमार जैन, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।
61. श्रीमती संतोष जैन ध.प. श्री प्रवीण कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।
62. श्री सूरजमल पुत्र श्री विनीत कुमार जैन, मोहल्ला गंजकटरा पूरणटरा पूरणजाट, जैन विला, मुरादाबाद (उ.प्र.)।
63. स्व. श्री शिखर चन्द जैन, 'टिम्बर कमीशन एजेन्ट', शंकरगंज, हापुड़ (उ.प्र.)।
64. श्रीमती राजेश्वरी जैन मातेश्वरी श्री राकेश जैन 31, सिविल लाईन, सीतापुर।
65. श्री राजकुमार जैन, मैसर्स रविदत्त प्रेमचन्द जैन बारदाने वाले, श्यामगंज, बरेली।
66. श्री बलवीर जैन, द्वारा-जानकी एक्सटेंशन रिफाइनरी, गाँधीगंज, शाहजहाँपुर।
67. श्री पन्नालाल सेठी, डीमापुर (नागालैंड)।
68. श्री वीरेन्द्र कुमार जैन, ईदगाह कालोनी, आगरा (उ.प्र.)।

69. श्री पोखपाल जैन, द्वारा-नावेल्टी मेटल इंडिया, मानसिंह गेट, अलीगढ़ (उ.प्र.)।
70. श्रीमती रश्मि जैन ध.प. श्री विजय कुमार जैन, दरियागंज, नई दिल्ली।
71. श्रीमती विमला देवी ध.प. श्री प्रमोद कुमार जैन इंजी., शाहजहाँपुर (उ.प्र.)।
72. स्व. श्रीमती कैलाशवती जैन ध.प. श्री कैलाश चन्द जैन इंजी., तोपखाना बाजार, मेरठ।
73. श्रीमती अरुण कुमार नांद्रेकर ध.प. भाऊ साहेब नांद्रेकर, मुलुन्ड (वेस्ट) मुम्बई।
74. श्री भागचन्द मनीष कुमार ठोलिया, द्वारा-किरन एजेंसी, पो. बुरहानपुर, (म.प्र.)।
75. श्री कैलाशचन्द राजकुमार जैन रांवका, पो. बिसवां (सीतापुर) उ.प्र.।
76. श्रीमती विद्यावती जैन, राजौरी गार्डन, नई दिल्ली।
77. श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले) एवं सुपुत्र श्री मदन कुमार, प्रदीप कुमार एवं प्रवीण कुमार जैन, धर्मपुरा, गाँधीनगर, दिल्ली।
78. श्रीमती अरुणा जैन, ध.प. प्रवीन्द्र कुमार जैन, प्रीतमपुरा, दिल्ली।
79. श्रीमती पुष्पादेवी, ध.प. महेन्द्र कुमार जैन, पुष्पांजली एन्क्लेव, दिल्ली।
80. श्री बाबूलाल तोताराम जैन, भुसावल (महा.)।
81. डॉ. अनुपम जैन, सुदामा नगर, इंदौर (म.प्र.)।
82. श्री विनय कुमार जैन, ज्वैलर्स, दरीबाकलां, दिल्ली।
83. स्व. श्री आनन्द प्रकाश जैन 'शान्तिप्रिय', जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.।
84. श्रीमती राजुलबाई ध.प. श्री नेमीचन्द जैन लोहाड़े, पो. कोपरगाँव (महा.)।
85. श्री धन्नालाल गोधा, मल्हारगंज, इंदौर (म.प्र.)।
86. श्री सुनील कुमार मनोज कुमार जैन, झिलमिल कालोनी, दिल्ली।
87. श्रीमती आशा जैन ध.प. श्री राजेश कुमार जैन बरुआ सागर (उ.प्र.)।
88. श्री पारसमल डूंगरमल जी पाटनी पो. मेड़तासिटी, नागौर (राजस्थान)।
89. श्री अनिल कुमार जैन (गुड़गांव वाले) प्रियदर्शनी विहार, दिल्ली-92।
90. श्रीमती कृष्णा बाई नेमीनाथ जैन, पी. वाले, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।
91. श्रीमती मंजूलता जैन ध.प. श्री प्रभात चन्द गोधा, नया बाजार, अजमेर (राज.)।
92. श्री प्रमोद कुमार जैन, पारस प्रिन्टर्स, शाहदरा-दिल्ली।
93. श्री चांदमल अनिल कुमार सरावगी, किशनगंज (बिहार)।
94. कुमारी अदिती सुपुत्री श्री अपोलो जी जैन सौगानी, इंदौर।
95. श्रीमती मंजूलता ध.प. प्रभाचन्द गोधा-नया बाजार, अजमेर।
96. श्री सुचेद्र कुमार शैलेन्द्र कुमार जैन, डाल्टनगंज (झारखंड)।
97. श्रीमती जतनदेवी लक्ष्मीचंद जैन, चेन्नई (तमिलनाडु)।
98. श्रीमती सखाई जैन ध.प. श्री जीतमल जैन, मड़ाना (कोटा) राज.।
99. श्री मोहित जैन पुत्र मुकेश जैन, जगन्नाथ जैन पहाड़िया, फतेहपुर (शेखावटी) राज.।
100. श्री नरेश जैन बंसल, गुड़गाँवा (हरि.)।
101. श्रीमती रतनबाई ध.प. राजेन्द्र प्रकाश कोठिया, कोटा (राज.)।
102. श्रीमती संतोष जैन ध.प. श्री अजीत कुमार जैन, भिवाड़ी (राज.)।
103. श्रीमती प्रेमलता जैन ध.प. श्री सुशील कुमार जैन, मलाड़ (मुम्बई)।
104. श्री राजेन्द्र कुमार पंचौलिया, इंदौर (म.प्र.)।
105. स्व. श्री मोहनलाल हेमचंद गांधी, सतारा (महा.)।
106. श्रीमती आरती जैन ध.प. श्री प्रकाशचंद जैन 'शीशे वाले', इलाहाबाद (उ.प्र.)
107. डॉ. विमला जैन ''विमल'' ध.प. श्री प्रकाशचंद जैन, फिरोजाबाद (उ.प्र.)

विषयानुक्रमणिका

क्र.स.	विषय	पृष्ठ सं.
1.	त्रिभुवनतिलक वंदना	1
2.	त्रिभुवन तिलक जिनालय पूजा	3
3.	भवनवासी जिनालय पूजा	8
4.	मध्यलोक जिनालय पूजा	22
5.	ढ़ाईद्वीप नवदेवता पूजा	29
6.	व्यंतर देव जिनालय पूजा	37
7.	ज्योतिष्क देव जिनालय पूजा	49
8.	वैमानिक देव जिनालय पूजा	58
9.	सिद्धशिला पूजा	68
10.	प्रशस्ति	78

मण्डल विधान का नक्शा

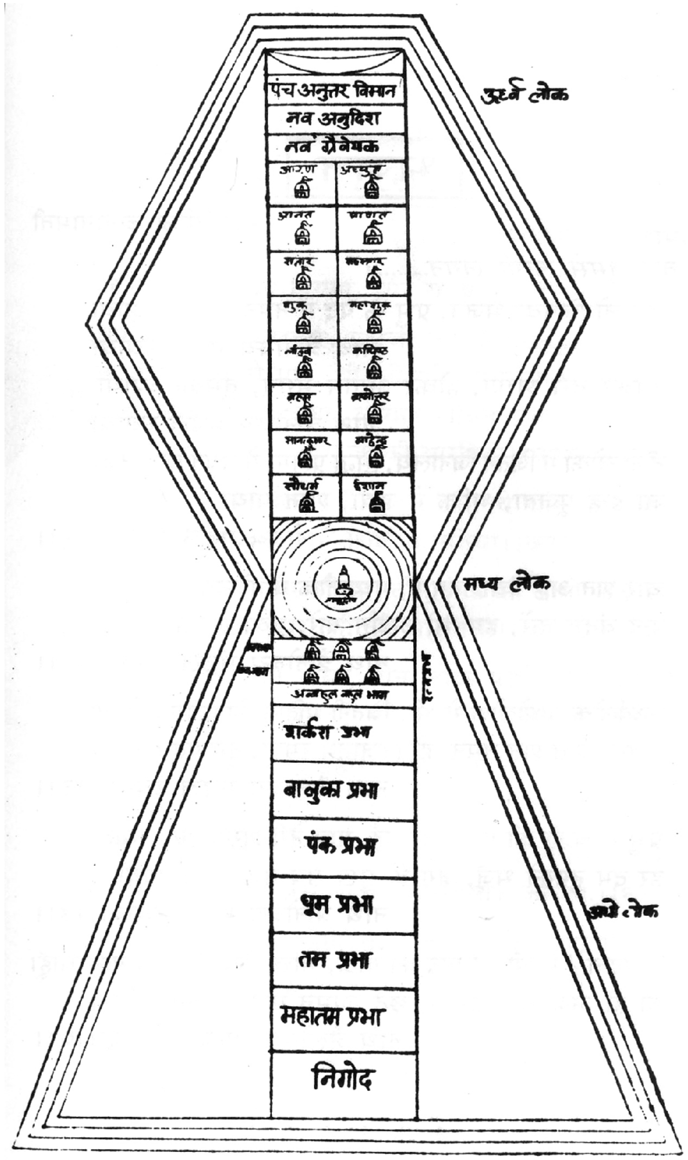

प्रथम पूजा	– समुच्चय पूजा	पंचम पूजा में	– 24 अर्घ्य 6 पूर्णार्घ्य
द्वितीय पूजा में	– 30 अर्घ्य 4 पूर्णार्घ्य	छठी पूजा में	– 10 अर्घ्य 2 पूर्णार्घ्य
तृतीय पूजा में	– 11 अर्घ्य 1 पूर्णार्घ्य	सातवीं पूजा में	– 14 अर्घ्य 3 पूर्णार्घ्य
चतुर्थ पूजा में	– 9 अर्घ्य 1 पूर्णार्घ्य	आठवीं पूजा में	– 16 अर्घ्य 1 पूर्णार्घ्य

त्रिभुवन तिलक वंदनाष्टक

–शम्भु छन्द –

त्रिभुवन के जितने चैत्यालय, अकृत्रिम उनको नित वंदूँ।
भव भव के संचित पाप पुंज, उन सबको इक क्षण में खंडूँ।।
असुरों के चौंसठ लाख नागसुर, के चौरासी लाख कहे।
वायूसुर के छ्यानवे लाख, सुपरण के बहत्तर लक्ष कहें।।1।।

विद्युत् अग्नी स्तनित उदधि, दिक् द्वीपकुमार भवनवासी।
इन छह में पृथक्-पृथक् जिनगृह, छीयत्तर लक्ष सुगुण राशी।।
सब लक्ष बहत्तर सात कोटि, ये जिनगृह भवनालय सुर के।
ये अधोलोक के जिनमंदिर, नितप्रति वंदूँ अंजलि करके।।2।।

इस मध्यलोक के पाँच मेरु, के अस्सी तीस कुलाचल के।
रजताचल के इक सौ सत्तर, अस्सी हैं वक्षाराचल के।।
गजदंत गिरी के बीस भवन, जंबू शाल्मलि के दश माने।
इष्वाकृति नग के चार चार, मनुजोत्तर के भी भव हानें।।3।।

अंजनगिरि के चउ दधिमुख के, सोलह रतिकर के बत्तिस हैं।
नंदीश्वर द्वीप जिनालय ये, बावन अतिशय गुणमंडित हैं।।
कुंडलगिरि रुचकगिरी के भी, हैं चार चार सब मिल करके।
ये चार शतक अट्ठावन हैं, जिनमंदिर मध्यलोक भर के।।4।।

व्यंतरदेवों ज्योतिष सुर के, सब संख्यातीत जिनालय हैं।
इस ऊपर ऊर्ध्वलोक में भी, वैमानिक वंदित आलय हैं।।
सौधर्म स्वर्ग में जिनमंदिर, बत्तीस लाख शाश्वत मानो।
ईशान स्वर्ग में अट्ठाइस, हैं लाख जिनालय सरधानो।।5।।

सानत्कुमार में बारह लख, माहेन्द्र स्वर्ग में आठ लक्ष।
दिव ब्रह्मयुगल में चार लाख, लांतव युग में पच्चास सहस।।
चालिस हजार दिव शुक्र युगल में, छह हजार युग शतार में।
जिननिलय सात सौ आनत औ, प्राणत आरण अच्युत दिव में।।6।।

ग्रैवेयक तीन अधो में हैं, इक सौ ग्यारह मध्यम त्रय में।
हैं इक सौ सात तथा जिनगृह, हैं निन्यानवे ऊर्ध्व त्रय में।।
नव अनुदिश में नव जिनमंदिर, पंचानुत्तर में पाँच कहे।
इन सबका वंदन करते ही, भविजन मनवांछित सिद्धि लहें।।7।।

तीनों लोकों के ये जिनगृह, सब आठ कोटि छप्पन सुलक्ष।
सत्तानवे सहस चार सौ औ, इक्यासी प्रमित कहे शाश्वत।।
नव सौ पच्चीस कोटि त्रेपन, हैं लाख सताइस सहस सही।
नव सौ अड़तालिस जिनप्रतिमा, प्रति जिनगृह इक सौ आठ कहीं।।8।।

सब जिनगृह में अनुपम शाश्वत, मानस्तंभादिक रचनाएँ।
वर्णन पढ़ते ही जन मन में, दर्शन की इच्छा प्रकटाएँ।।
जिनबिंब पांचशत धनुष तुंग, उन वीतराग छवि मनहारी।
मैं केवल ''ज्ञानमती'' हेतू, नित नमूँ जिनालय सुखकारी।।9।।

ॐ ह्रीं जिनयज्ञप्रतिज्ञापनाय मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

त्रिभुवन तिलक जिनालय पूजा

(समुच्चय पूजा)

पूजा नं. 1

–नरेन्द्र छंद –

त्रिभुवन तिलक जिनालय शाश्वत, आठ कोटि सुखराशी।
छप्पन लाख हजार सत्यानवे चार शतक इक्यासी।।
प्रति जिनगृह में मणिमय प्रतिमा इक सौ आठ विराजें।
आह्वानन कर जजूँ यहाँ मैं जन्म मरण दुःख भाजें।।1।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनसंबंधि अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनसंबंधि अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनसंबंधि अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथ अष्टक-स्रग्विणी छंद –

शुद्ध गंगानदी नीर झारी भरूँ।
नाथ के पाद में तीन धारा करूँ।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊं बड़े चाव से।।1।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनसंबंधि अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिजिनालयजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

गंध चंदन घिसाके कटोरी भरूँ।
नाथ पादाब्ज अर्चूं सभी दुःख हरूँ।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊं बड़े चाव से।।2।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनसंबंधि अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिजिनालयजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धौत तंदुल शशी रश्मि सम श्वेत हैं।
नाथ के अग्र में पुंज सुख हेतु हैं।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊं बड़े चाव से।।3।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनसंबंधि अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंद बेला सुगंधित कुसुम ले लिये।
नाथ पादाब्ज में आज अर्पण किये।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊं बड़े चाव से।।4।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनसंबंधि अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिजिनालयजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

खीर बरफी अंदरसा पुआ लायके।
नाथ के सामने चरु चढ़ाऊँ अबे।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊं बड़े चाव से।।5।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनसंबंधि अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिजिनालयजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप ज्योती लिये आरती मैं करूँ।
मोह हर ज्ञान की भारती मैं भरूँ।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊं बड़े चाव से।।6।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनसंबंधि अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिजिनालयजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप खेऊँ अबे धूपघट में जले।
कर्म निर्मूल हो देहकांती मिले।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊं बड़े चाव से।।7।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनसंबंधि अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिजिनालयजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम्र अंगूर केला चढ़ाऊँ भले।
मोक्ष की आश सह सर्व वांछित फले।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊं बड़े चाव से।।8।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनसंबंधि अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुः-शतैकाशीतिजिनालयजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ में स्वर्ण चांदी कुसुम ले लिये।
नाथ को अर्पहूँ रत्नत्रय के लिए।।
सर्व शाश्वत जिनालय जजूँ भाव से।
स्वात्म पीयूष पीऊं बड़े चाव से।।9।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनसंबंधि अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुः-शतैकाशीतिजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

श्री जिनवर पादाब्ज, शांतीधारा मैं करूँ।
मिले स्वात्मसाम्राज, त्रिभुवन में सुख शांति हो।।10।।

शांतये शांतिधारा।

बेला हरसिंगार, कुसुमांजलि अर्पण करूँ।
मिले सर्वसुखसार, त्रिभुवन की सुखसंपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – **ॐ ह्रीं त्रिभुवनतिलकजिनालयजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

त्रिभुवन तिलक जिनेन्द्र गृह, जिनप्रतिमा जिनसूर्य।
नमूँ अनंतों बार मैं, भव्य कमलिनी सूर्य।।1।।

–शंभु छंद–

जय अधोलोक के जिनगृह सात करोड़ बहत्तर लाख नमूँ।
जय मध्यलोक के चार शतक अट्ठावन जिनगृह नित्य नमूँ।।

जय व्यंतरसुर ज्योतिष सुर के जिनगेह असंख्याते प्रणमूँ।
जय ऊरध के चौरासि लाख सत्यानवे सहस तेईस नमूँ।।1।।

कोट्यष्ट सुछप्पन लाख सत्यानवे सहस चार सौ इक्यासी।
जिनधाम अकृत्रिम नमूँ नमूँ ये कल्पवृक्षसम सुख राशी।।
नव सौ पचीस कोटी त्रेपन्न लाख सत्ताइस सहस तथा।
नव सौ अड़तालिस जिनप्रतिमा मैं नमूँ हरो भवव्याधि व्यथा।।2।।

जिनमंदिर लंबे सौ योजन पचहत्तर तुंग विस्तृत पचास।
उत्कृष्ट प्रमाण कहा श्रुत में मध्यम लंबे योजन पचास।।
चौड़े पचीस ऊँचे साढ़े सैंतिस जघन्य लंबे पचीस।
चौड़े साढ़े बारह योजन ऊँचे योजन पौने उनीस।।3।।

मेरू में भद्रसाल नंदनवन के वर द्वीप नंदीश्वर के।
उत्कृष्ट जिनालय मुनि कहते मैं नमूँ नमूँ अंजलि करके।।
सौमनस रुचकगिरि कुंडलगिरि वक्षार कुलाचल के मंदिर।
मनुजोत्तर इष्वाकार अचल मध्यम प्रमाण के जिनमंदिर।।4।।

पांडुकवन के जिनगृह जघन्य मैं नमूँ नमूँ शिर नत करके।
रजताचल जंबू शाल्मलि तरू इनके मंदिर सबसे छोटे।।
ये एक कोस लंबे आधे चौड़े पौने कोस ऊँचे हैं।
सर्वत्र लघू जिनमंदिर का परिमाण यही मुनि गाते हैं।।5।।

जिनगृह को बेढ़े तीन कोट चहुँदिश में गोपुर द्वार कहें।
प्रतिवीथी मानस्तंभ बने प्रतिवीथी नव नव स्तूप कहें।।
मणिकोट प्रथम के अंतराल वन भूमि लतायें मनहरतीं।
परकोट द्वितिय के अंतराल दशविधी ध्वजाएँ फरहरतीं।।6।।

परकोट तृतिय के बीच चैत्यभूमी अतिशायि शोभती है।
सिद्धार्थवृक्ष अरू चैत्यवृक्ष बिम्बों से चित्त मोहती है।।
प्रतिमंदिर मध्य गर्भगृह इक सौ आठ आठ अति सुंदर हैं।
इन गर्भगृह में सिंहासन पर जिनवरबिम्ब मनोहर हैं।।7।।

ये बिम्ब पाँच सौ धनुष तुंग पद्मासन राजें मणिमय हैं।
बत्तीस युगल यक्ष दोनों बाजू में चंवर ढुराते हैं।।
जिनप्रतिमा निकट श्रीदेवी श्रुतदेवी की मूर्ती शोभें।
सानत्कुमार सर्वाण्हयक्ष की मूर्ति भव्य जन मन लोभें।।8।।

प्रत्येक बिम्ब के पास सुमंगल द्रव्य एक सौ आठ-आठ।
भृंगार कलश दर्पण चामर ध्वज छत्र व्यजन अरू सुप्रतिष्ठ।।
श्रीमंडप आगे स्वर्ण कलश शोभें बहु धूप घड़े सोहें।
मणिमय सुवर्णमय मालाएँ चारण ऋषि का भी मन मोहें।।9।।

मुखमंडप प्रेक्षामंडप अरू वंदन अभिषेक मंडपादी।
क्रीड़ा नर्तन संगीत गुणनगृह चित्रभवन विस्तृत अनादि।।
बहुविध रचना इन मंदिर में गणधर भी नहिं कह सकते हैं।
माँ सरस्वती नित गुण गाये मुनिगण अतृप्त ही रहते हैं।।10।।

मैं नित्य जिनालय को वंदूँ नित शीश झुकाऊँ गुण गाऊँ।
जिनप्रतिमा के पद कमलों में बहुबार नमूँ नित शिर नाऊँ।।
प्रत्यक्ष दर्श मिल जाय प्रभो! इसलिए परोक्ष करूँ वंदन।
निज ज्ञानमती ज्योति प्रगटे इस हेतु करूँ शत-शत वंदन।।11।।

दोहा – **चिंतामणि जिनमूर्तियाँ, चिंतित फलदातार।**
चिच्चैतन्य जिनेन्द्र को, नमूँ-नमूँ शत बार।।12।।

ॐ ह्रीं त्रिलोकसंबंधिअष्टकोटिषट्पंचाशत्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिजिनालयजिनबिम्बेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद –

जो भव्यजन त्रिभुवन तिलक जिनधाम की अर्चा करें।
त्रिभुवन चतुर्गति भ्रमण से, निज की स्वयं रक्षा करें।।
अतिशीघ्र ही त्रिभुवनतिलक निज सिद्धपद को पायेंगे।
निज ज्ञानमति सुख पूर्ण कर, फिर वे यहाँ नहिं आएंगे।।1।।

।। इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 2)

भवनवासी जिनालय पूजा

–अथ स्थापना-अडिल्ल छंद –

भवनवासि देवों के गृह में जानिये।
सात करोड़ बहत्तर लाख प्रमाणिये।।
ये शाश्वत जिनभवन बने हैं मणिमयी।
आह्वानन कर पूजूँ पाऊँ शिवमही।।1।।

ॐ ह्रीं भवनवासिभवनस्थितसप्तकोटिद्वासप्ततिलक्षजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं भवनवासिभवनस्थितसप्तकोटिद्वासप्ततिलक्षजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं भवनवासिभवनस्थितसप्तकोटिद्वासप्ततिलक्षजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथ अष्टक-चामर छंद –

क्षीरसिंधु के समान स्वच्छ नीर लाइये।
श्रीजिनेन्द्रपाद में चढ़ाय ताप नाशिये।।
भवनवासि देव के जिनेन्द्र सद्म को जजूँ।
अनंत रिद्धि सिद्धिप्रद जिनेन्द्रबिम्ब को भजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं भवनवासिभवनस्थितसप्तकोटिद्वासप्ततिलक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदनादि गंध लेय पात्र में भराइये।
श्री जिनेन्द्रपाद में समर्च सौख्य पाइये।।
भवनवासि देव के जिनेन्द्र सद्म को जजूँ।
अनंत रिद्धि सिद्धिप्रद जिनेन्द्रबिम्ब को भजूँ।।2।।

ॐ ह्रीं भवनवासिभवनस्थितसप्तकोटिद्वासप्ततिलक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यो चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षीरफेन के समान श्वेत शालि लाइये।
श्री जिनेन्द्रपाद अग्र पुंज को रचाइये।।
भवनवासि देव के जिनेन्द्र सद्म को जजूँ।
अनंत रिद्धि सिद्धिप्रद जिनेन्द्रबिम्ब को भजूँ।।3।।

ॐ ह्रीं भवनवासिभवनस्थितसप्तकोटिद्वासप्ततिलक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मोगरा गुलाब पुष्प केतकी मंगाइये।
श्रीजिनेन्द्रपाद में चढ़ाय सौख्य पाइये।।
भवनवासि देव के जिनेन्द्र सद्म को जजूँ।
अनंत रिद्धि सिद्धिप्रद जिनेन्द्रबिम्ब को भजूँ।।4।।

ॐ ह्रीं भवनवासिभवनस्थितसप्तकोटिद्वासप्ततिलक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यो पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मालपूप सेमई सुवर्ण पात्र में लिये।
श्रीजिनेन्द्र को चढ़ाऊँ पूर्ण तृप्ति के लिए।।
भवनवासि देव के जिनेन्द्र सद्म को जजूँ।
अनंत रिद्धि सिद्धिप्रद जिनेन्द्रबिम्ब को भजूँ।।5।।

ॐ ह्रीं भवनवासिभवनस्थितसप्तकोटिद्वासप्ततिलक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यो नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्ण दीप में कपूर को जलाय लीजिये।
श्रीजिनेन्द्र के समक्ष आरती उतारिये।।
भवनवासि देव के जिनेन्द्र सद्म को जजूँ।
अनंत रिद्धि सिद्धिप्रद जिनेन्द्रबिम्ब को भजूँ।।6।।

ॐ ह्रीं भवनवासिभवनस्थितसप्तकोटिद्वासप्ततिलक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यो दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

गंध से सुगंध धूप अग्नि संग खेइये।
कर्म को जलाय के अपूर्व सौख्य लेइये।।

भवनवासि देव के जिनेन्द्र सद्म को जजूँ।
अनंत रिद्धि सिद्धिप्रद जिनेन्द्रबिम्ब को भजूँ।।7।।

ॐ ह्रीं भवनवासिभवनस्थितसप्तकोटिद्वासप्ततिलक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यो धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम संतरा बदाम द्राक्ष थाल में भरें।
श्रीजिनेन्द्र को चढ़ाय आत्मसौख्य को भरें।।
भवनवासि देव के जिनेन्द्र सद्म को जजूँ।
अनंत रिद्धि सिद्धिप्रद जिनेन्द्रबिम्ब को भजूँ।।8।।

ॐ ह्रीं भवनवासिभवनस्थितसप्तकोटिद्वासप्ततिलक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यो फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर गंध शालि पुष्प आदि अष्ट द्रव्य ले।
अर्घ्य को चढ़ाय के अपूर्व सौख्य हो भले।।
भवनवासि देव के जिनेन्द्र सद्म को जजूँ।
अनंत रिद्धि सिद्धिप्रद जिनेन्द्रबिम्ब को भजूँ।।9।।

ॐ ह्रीं भवनवासिभवनस्थितसप्तकोटिद्वासप्ततिलक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

हेम भृंग में स्वच्छ जल, जिनपद धार करंत।
तिहुंजग में हो शांतिसुख, परमानंद भरंत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

चंप चमेली मोगरा, सुरभित हरसिंगार।
पुष्पांजलि अर्पण करत, मिले आत्म सुखसार।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–सोरठा–

जिनवर निलय अनूप, सौ इन्द्रों से वंद्य हैं।
जजत मिले निजरूप, पुष्पांजलि से पूजहूँ।।

इति मण्डलस्योपरि मेरुपर्वतस्याधःस्थाने पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

—नरेन्द्र छंद—

भवनवासि के दश भेदों में, असुर कुमार प्रथम हैं।
इनमें प्रमुख इन्द्र दो मानें, चमर व वैरोचन हैं।।
चौंतिस लाख भवन में उतने जिनगृह चमर इन्द्र के।
जिनगृह जिनप्रतिमा को पूजूँ अर्घ समर्पण करके।।1।।

ॐ ह्रीं असुरकुमारदेवेषु चमरेन्द्रस्य चतुस्त्रिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

असुर जाति में वैरोचन के तीन लाख भवनों में।
तीस लाख ही जिनमंदिर हैं मणिमय प्रतिमा उनमें।।
अर्घ चढ़ाकर मैं नित पूजूँ सर्व अरिष्ट नशाऊँ।
निजआतम अनुभव रस पीकर मुक्तिवल्लभा पाऊँ।।2।।

ॐ ह्रीं असुरकुमारदेवेषु द्वितीयवैरोचनेन्द्रस्य त्रिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नागकुमार भवनवासी में दोय इंद्र माने हैं।
भूतानंद और धरणानंद विभव अधिक ठाने हैं।।
प्रथम इंद्र के लाख चवालिस भवन कहे शाश्वत हैं।
प्रतिगृह में जिनमंदिर प्रतिमा जजत स्वात्म भासत है।।3।।

ॐ ह्रीं नागकुमारदेवेषु भूतानंदेन्द्रस्य चतुःचत्वारिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धरणानंद इंद्र के चालिस लाख भवन सुंदर हैं।
प्रतिभवनों में जिनमंदिर हैं शाश्वत क्षेमंकर हैं।।
सबमें इक सौ आठ सु इक सौ आठ जिनेश्वर प्रतिमा।
अर्घ चढ़ाकर मैं नित पूजूँ पाऊँ निधी अनुपमा।।4।।

ॐ ह्रीं नागकुमारदेवेषु धरणानंदेन्द्रस्य चत्वारिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव सुपर्णकुमार भवनवासी में सुरपति दो हैं।
वेणु वेणुधारी नामक ये अनुशासन करते है।।

वेणु इंद्र के भवन अकृत्रिम अड़तिस लाख बखाने।
उतने जिनगृह को मैं पूजूँ कर्म कुलाचल हाने।।5।।

ॐ ह्रीं सुपर्णकुमारदेवेषु वेणुइन्द्रस्य अष्टत्रिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इंद्र वेणुधारी के चौंतिस लाख भवन सुंदर हैं।
चौंतिस लाख जिनालय उनमें जिनप्रतिमा मनहर हैं।।
मैं नित पूजूँ अर्घ चढ़ाकर सर्व दुःखों से छूटूँ।
परमानंद सुधारस पीकर जन्म मरण से छूटूँ।।6।।

ॐ ह्रीं सुपर्णकुमारदेवेषु वेणुधारिइन्द्रस्य चतुस्त्रिशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वीपकुमार भवनवासी में दोय इन्द्र माने हैं।
पूर्ण वशिष्ठ नाम उनके हैं विभव अधिक ठाने हैं।।
पूर्ण इन्द्र के चालिस लाख भवन उतने जिनमंदिर।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाकर नितप्रति वंदे उन्हें पुरंदर।।7।।

ॐ ह्रीं द्वीपकुमारदेवेषु पूर्णेन्द्रस्य चत्वारिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छत्तिस लाख वशिष्ठ इंद्र के भवन बने अतिसुंदर।
एक एक जिनमंदिर उनमें, अर्चा करें पुरंदर।।
इनकी पूजा भक्ती करते, भव भव पातक नशते।
अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ मैं भी, ज्ञानदिवाकर प्रगटे।।8।।

ॐ ह्रीं द्वीपकुमारदेवेषु वशिष्टेन्द्रस्य षट्त्रिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उदधिकुमार भवनसुर में जलप्रभ जलकांत प्रमुख हैं।
चालिस लाख भवन जलप्रभ के, उतने ही जिनगृह हैं।।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाकर रुचि से, ज्ञानज्योति प्रकटाऊँ।
रोग शोक दुःख द्वंद नशाकर आत्मसुधारस पाऊँ।।9।।

ॐ ह्रीं उदधिकुमारेषु जलप्रभइन्द्रस्य चत्वारिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कहे भवन जलकांत इंद्र के छत्तिस लाख अकृत्रिम।
उन सबमें जिनमंदिर जिनवर प्रतिमा कहीं अकृत्रिम।।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाकर नितप्रति कर्मकलंक नशाऊँ।
सप्तपरमस्थान प्राप्तकर परमधाम निज पाऊँ।।10।।

ॐ ह्रीं उदधिकुमारेषु जलकान्तइन्द्रस्य षट्त्रिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरविद्युत्कुमार के दो हैं इन्द्र अतुल वैभवयुत।
घोष और महघोष नाम हैं जिनवर भक्तीसंयुत।।
चालिस लाख भवन माने हैं घोष इंद्र से सुंदर।
इतने ही जिनमंदिर इनमें पूजूँ सदा रूचीधर।।11।।

ॐ ह्रीं विद्युत्कुमारेषु घोषइन्द्रस्य चत्वारिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

छत्तिस लाख भवन शाश्वत हैं महाघोष सुरपति के।
उतने ही जिनमंदिर शाश्वत बने स्वर्णमणियों के।।
उनमें जिनप्रतिमाएँ सुंदर मोक्ष सौख्य देती हैं।
इनके पूजन करते ही ये भवदुख हर लेती हैं।।12।।

ॐ ह्रीं विद्युत्कुमारेषु महाघोषइन्द्रस्य षट्त्रिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर स्तनित कुमारों में दो इन्द्र प्रमुख हैं माने।
हरिषेण हरिकांत नाम हैं जिनवर भक्त बखाने।।
हरिषेण के चालीस लाख भवन जिनगृह भी इतने।
इनको पूजूँ अर्घ्य चढ़ाकर फलें मनोरथ अपने।।13।।

ॐ ह्रीं स्तनितकुमारदेवेषु हरिषेणइन्द्रस्य चत्वारिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हरिकांत के छत्तिस लाख भवन हैं शाश्वत सुंदर।
छत्तिस लाख जिनालय मणिमय प्रतिमाओं से मनहर।।

अर्घ्य चढ़ाकर पूजूँ रुचि से भव भव भ्रमण मिटाऊँ।
आत्मज्योति को प्रकटित करके फेर न भव में आऊँ।।14।।

ॐ ह्रीं स्तनितकुमारदेवेषु हरिकांतेन्द्रस्य षट्त्रिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिक्कुमार देवों में अधिपति दो हैं सुकृतशीला।
अमितगति अरु अमितवाहना भवनों के प्रतिपाला।।
अमितगति के चालिस लाख भवन सबमें जिनमंदिर।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ाकर नितप्रति ये हैं भव्य हितंकर।।15।।

ॐ ह्रीं दिक्कुमारदेवेषु अमितगतिइन्द्रस्य चत्वारिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन्द्र अमितवाहन के छत्तिस लाख भवन शाश्वत हैं।
सबमें जिनमंदिर सुअकृत्रिम स्वर्णमयी राजत हैं।।
जिनमंदिर की जिनप्रतिमा को वंदन करूँ सतत मैं।
कर्मकालिमा दूर हटाकर पाऊँ शांति हृदय में।।16।।

ॐ ह्रीं दिक्कुमारदेवेषु अमितवाहनेन्द्रस्य षट्त्रिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्निकुमार सुरों में अग्निशिखी व अग्निवाहन हैं।
अग्निशिखी के चालीस लाख भवन जन मनभावन हैं।।
सबमें जिनमंदिर अतिशायी जिनबिम्बों को धारें।
उनकी पूजा भक्ती करके हम निजगुण विस्तारें।।17।।

ॐ ह्रीं अग्निकुमारदेवेषु अग्निशिखिइन्द्रस्य चत्वारिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इंद्र अग्निवाहन के छत्तिस लाख भवन शाश्वत हैं।
इन सबमें जिनमंदिर जिनवरप्रतिमा रवि लाजत हैं।।
इन सबको मैं नितप्रति पूजूँ मोहतिमिर को नाशूँ।
निजआतम अनुभव रस पीकर सम्यक् ज्योति प्रकाशूँ।।18।।

ॐ ह्रीं अग्निकुमारदेवेषु अग्निवाहनेन्द्रस्य षट्त्रिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वायुकुमारसुरों में अधिपति दो हैं जिनवर भाक्तिक।
वो बेलंब प्रभंजन नामा सुखद पवन विस्तारक।।
भवन पचास लाख के अधिपति सुर बेलंब कहाये।
उतने ही जिनमंदिर सबको झुक झुक शीश नवायें।।19।।

ॐ ह्रीं वायुकुमारदेवेषु बेलंबइन्द्रस्य पंचाशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इंद्र प्रभंजन के हैं छ्यालिस लाख भवन मनहारी।
उतने ही जिनमंदिर उनसे जिनप्रतिमा सुखकारी।।
इन सबको मैं भक्ति भाव से पूजूँ अर्घ्य चढ़ाऊँ।
हे प्रभु! ऐसी शक्ती दीजे आतमज्योति जगाऊँ।।20।।

ॐ ह्रीं वायुकुमारदेवेषुप्रभंजनेन्द्रस्य षट्चत्वारिंशल्लक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

– पूर्णार्घ्य–

भवनवासि देवों के सब मिल शाश्वत जिनगृह माने।
सात करोड़ सुलाख बहत्तर मणिमय सुंदर जाने।।
इनकी भक्ति वंदना करते कर्म कुलाचल नाशूँ।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरितमय अभिनव ज्योति प्रकाशूँ।।1।।

ॐ ह्रीं भवनवासिभवनस्थितसप्तकोटिद्वासप्ततिलक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रतिजिनमंदिर इक सौ अठ हैं जिनप्रतिमाएँ रत्नमयी।
आठ अरब तैंतीस करोड़ छियत्तर लाख प्रमाण कहीं।।
हाथ जोड़कर शीश झुकाकर करूँ वंदना भक्ती से।
क्षायिक सम्यक्‌रत्न प्राप्तकर, कर्म हनूँ निज शक्ती से।।2।।

ॐ ह्रीं भवनवासिभवनजिनालयस्थितअष्टार्बुदत्रयस्त्रिंशत्कोटिषट्सप्ततिलक्ष-जिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ चैत्यवृक्ष अर्घ्य

–चौबोल छंद –

असुरकुमार देव में कुल का, चिन्ह 'सुपीपल वृक्ष' रहे।
चैत्यवृक्ष इस मूलभाग में चारों दिश जिनबिम्ब कहें।।
पाँच पाँच जिनप्रतिमा चउदिश पद्मासन से राजे हैं।
मानस्तंभ सबों के आगे पूजत ही अघ नाशे हैं।।1।।

ॐ ह्रीं असुरकुमारदेवअश्वत्थचैत्यवृक्षस्थितविंशतिजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नागकुमार देव में कुलतरु 'सप्तपर्ण' अतिशोभे हैं।
मूलभाग में पाँच पाँच जिनप्रतिमा जनमन लोभे हैं।।
मानस्तंभ सबों के आगे अग्रभाग में जिनप्रतिमा।
चहुँदिश सात सात जिनप्रतिमा पूजूँ उन्हें अतुल महिमा।।2।।

ॐ ह्रीं नागकुमारदेवसप्तपर्णचैत्यवृक्षस्थितविंशतिजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुपर्णकुमार देव का कुलतरु 'शाल्मलि' चैत्यवृक्ष माना।
उसमें बीस जिनेश्वर प्रतिमा पूजत सौख्य मिले नाना।।
पद्मासन से राज रहीं हैं प्रातिहार्य से संयुत हैं।
इनकी पूजा अर्चा करते, महापुण्य भी संचित है।।3।।

ॐ ह्रीं सुपर्णकुमारदेवशाल्मलिचैत्यवृक्षस्थितविंशतिजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वीपकुमार सुरों में 'जामुन वृक्ष' चैत्यतरु मान्य हुआ।
चारों दिश में पाँच-पाँच जिनप्रतिमा से जग वंद्य हुआ।।
मानस्तंभ चार दिश में हैं बीस सभी को पूजूँ मैं।
अट्ठाइस अट्ठाइस प्रतिमा जजत दुःखों से छूटूँ मैं।।4।।

ॐ ह्रीं द्वीपकुमारदेवजम्बूचैत्यवृक्षस्थितविंशतिजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उदधिकुमार सुरों का 'वेतस वृक्ष' चैत्यतरु कहलाता।
मूलभाग में जिनप्रतिमा को धारे सुरगण मन भाता।।
मुनिजन भी इन चैत्यवृक्ष की जिनप्रतिमा को नित वंदें।
मानस्तंभ सहित बिम्बों को पूजत ही हम भव खंडे।।5।।

ॐ ह्रीं उदधिकुमारदेववेतसचैत्यवृक्षस्थितविंशतिजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुरविद्युत्कुमार के कुल में 'वृक्ष कदंब' चैत्यतरु है।
चारों दिश में पाँच पाँच जिनप्रतिमा संयुत सुखकर है।।
प्रति प्रतिमा के आगे मानस्तंभ बने अतिशय सुंदर।
उनकी पूजा भक्ती करते भवि पा लेते शिवसुंदर।।6।।

ॐ ह्रीं विद्युत्कुमारदेवकदम्बचैत्यवृक्षस्थितविंशतिजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव स्तनित कुमार कुलों में 'वृक्ष प्रियंगु' चैत्यतरु है।
बीस बिम्ब से पूज्य असुर सुर सुरपति वंद्य कल्पतरु है।।
मानस्तंभ जिनेश्वर प्रतिमा गणधर भी उनको वंदें।
हम भी पूजें अर्घ्य चढ़ाकर मन में अतिशय आनंदें।।7।।

ॐ ह्रीं स्तनितकुमारदेवप्रियंगुवृक्षस्थितविंशतिजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिक्कुमार का चैत्यवृक्ष तरुवर 'शिरीष' अतिशोभ रहा।
प्रतिदिश पाँच-पाँच जिनप्रतिमा से जनजन मन लोभ रहा।।
पद्मासन राजित जिनप्रतिमा प्रातिहार्य से मंडित हैं।
इनकी पूजा वंदन भक्ती करते ही दुख खंडित हैं।।8।।

ॐ ह्रीं दिक्कुमारदेवशिरीषचैत्यवृक्षस्थितविंशतिजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अग्निकुमार देव का वृक्ष 'पलाश' चैत्यतरु सुंदर है।
उनकी जिनप्रतिमा की कीर्ती नित गाते सुर किन्नर हैं।।

मानस्तंभ बीस की प्रतिमा कहीं पाँच सौ साठ वहाँ।
इन सबकी पूजा करते ही मिले सुपद सब सौख्य जहाँ।।9।।

ॐ ह्रीं अग्निकुमारदेवपलाशचैत्यवृक्षस्थितविंशतिजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वायुकुमार देव का चैत्यवृक्ष शुभनाम 'राजद्रुम'[1] है।
मूलभाग में पाँच-पाँच जिनप्रतिमा धारे अनुपम है।।
इन प्रतिमाओं की पूजा से रोग शोक दुख टलते हैं।
भूत प्रेत बाधा नहिं होती सर्व मनोरथ फलते हैं।।10।।

ॐ ह्रीं वायुकुमारदेवराजद्रुमचैत्यवृक्षस्थितविंशतिजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य –

भवनवासि के दश भेदों में, दशविध चैत्यवृक्ष मानें।
सब में चालिस-चालिस प्रतिमा सब मिल दो सौ सरधाने।।
पद्मासनयुत वीतराग छवि प्रातिहार्य से शोभित हैं।
रत्नमयी जिनप्रतिमा वंदूँ वांछित फलदायी शुभ हैं।।1।।

ॐ ह्रीं भवनवासिदेवसंबंधिदशचैत्यवृक्षस्थितद्विशतजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक-एक जिनप्रतिमा आगे एक-एक मानस्तंभ हैं।
प्रतिदिश में प्रतिमा सात-सात सब इक में अट्ठाइस हैं।।
इन दो सौ मानस्तंभों में छप्पन सौ जिनप्रतिमाएँ हैं।
इन सबको पूजूँ अर्घ्य चढ़ा, ये समकित रत्न दिलायें हैं।।2।।

ॐ ह्रीं भवनवासिदेवसंबंधिचैत्यवृक्षजिनप्रतिमासन्मुखद्विशतमानस्तंभस्थित-पंचसहस्रषट्शतजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – **ॐ ह्रीं त्रिभुवनतिलकजिनालयजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

---

1. चारोली का वृक्ष।

जयमाला

–दोहा–

शाश्वत श्रीजिनवर भवन, श्रीजिनबिम्ब महान्।
गाऊँ गुणमणिमालिका, मिले धर्म शुचि ध्यान।।1।।

(चाल-हे दीनबंधु..........)

जैवंत भवनवासि के शाश्वत जिनालया।
जैवंत सातकोटि बहत्तर जिनालया।।
चौंसठ सुलाख भवन असुरकुमरदेव के।
चौरासि लाख भवन कहे नागकुमर के।।2।।

सुपर्णसुर के लाख बाहत्तर भवन कहे।
सुर द्वीपकुमर के छियत्र* लाख गृह रहें।।
उदधी स्तनित विद्युते* दिक् अग्निकुमर के।
बस लाख छियत्तर भवन हैं इन प्रत्येक के।।3।।

वायूकुमार के भवन हैं लाख छ्यानवे।
सब सात कोटि बहत्तर सुलक्ष जानवे।।
दश भेद भवनवासि के प्रत्येक भवन में।
जय जय जिनेन्द्र गेह राजते सुमध्य में।।4।।

इस रत्नप्रभा भूमि के सुतीन भाग हैं।
खरभाग पंकभाग में भावन के भवन हैं।।
सुर नागकुमारादि नव प्रकार प्रथम में।
रहते असुरकुमार देव पंकभाग में।।5।।

इनके भवन भवनपुरा आवास त्रय कहे।
किनही सुरों के त्रय प्रकार के स्थल रहें।।
ये असुरकुमर मात्र भवन में हि रहे हैं।
इन सबके भवन समसुचतुष्कोण कहे हैं।।6।।

* छियत्तर। * उदधिकुमार, स्तनित कुमार, विद्युत्कुमार, दिक्कुमार, अग्निकुमार इन सबके 76-76 लाख भवन हैं।

ऊँचाई तीनशतक योजनों सुभवन की।
संख्यात व असंख्य योजनों की विस्तृती।।
योजन सुएक शतक तुंग महाकूट हैं।
ये रत्नमयी कूट वेदियों के बीच हैं।।7।।

इन कूट उपरि श्रीजिनेन्द्रभवन रत्न के।
सब तीन कोट चार गोपुरों से युक्त ये।।
प्रत्येक वीथियों में मानतंभ शोभते।
नौ नौ स्तूप बिंबसहित चित्त मोहते।।8।।

परकोट अंतराल में त्रय भूमियाँ कहीं।
वनभूमि ध्वजाभूमि चैत्यभूमि सुखमही।।
मंदिर में वंदनाभवन अभिषेकमंडपा।
नर्तन भवन संगीतभवन प्रेक्षमंडपा।।9।।

स्वाध्यायभवन चित्र मंडपादि बने हैं।
जिनमंदिरों में देवछंद रम्य घने हैं।।
प्रत्येक जिनालय में इक सौ आठ बिम्ब हैं।
पद्मासनों से राजते जिनेश बिम्ब हैं।।10।।

प्रतिमा के उभय श्रीदेवि श्रुतदेवि मूर्ति हैं।
सर्वाण्ह यक्ष सनत्कुमर यक्ष मूर्ति हैं।।
भृंगार कलश चामरादि अष्ट मंगली।
प्रत्येक इक सौ आठ-आठ शोभते भली।।11।।

प्रत्येक बिम्ब दोनों तरफ ढोरते चंवर।
हैं नागयक्ष मूर्तियाँ जो सर्व चित्तहर।।
सद्दृष्टि देव भक्ति भरें पूजते सदा।
मिथ्यादृशी कुलदेव मान वंदते मुदा।।12।।

वीणा मृदंग दुंदुभी बहुवाद्य बजाके।
स्तोत्र पढ़ें नृत्य करें भक्ति बढ़ाके।।

जल गंध अष्ट द्रव्य लिये अर्चना करें।
जीवन सफल करें जिनेन्द्र वंदना करें।।13।।

जय जय जिनेन्द्र बिम्ब की मैं वंदना करूँ।
संपूर्ण कर्म शत्रु की मैं खंडना करूँ।।
जिनभक्ति के प्रसाद से संसार से तिरूँ।
निज ज्ञानमती पूर्ण हो भव वन में ना फिरूँ।।14।।

–घत्ता –

जय जय जिनप्रतिमा, अद्भुत महिमा, भवनवासि के जिनगेहा।
जय मुक्तिरमा घर, वंदत सुर नर, मैं पूजूँ नित धर नेहा।।15।।

ॐ ह्रीं भवनवासिदेवभवनस्थितसप्तकोटिद्वासप्ततिलक्षजिनालयजिनबिम्बेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद –

जो भव्यजन त्रिभुवनतिलक जिनधाम की अर्चा करें।
त्रिभुवन चतुर्गति भ्रमण से, निज की स्वयं रक्षा करें।।
अतिशीघ्र ही त्रिभुवनतिलक निज सिद्धपद को पायेंगे।
निज ज्ञानमति सुख पूर्ण कर, फिर वे यहाँ नहिं आएंगे।।1।।

।। इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 3)

मध्यलोक जिनालय पूजा

–शंभु छंद –

श्री स्वयंसिद्ध जिनमंदिर यहां पर चार शतक अट्ठावन हैं।
मणिमय अकृत्रिम जिनप्रतिमा ऋषि मुनिगण के मनभावन हैं।।
सौ इंद्रों से वंदित जिनगृह मैं इनकी पूजा नित्य करूँ।
आह्वानन संस्थापन करके निज के सन्निध नित्य करूँ।।1।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिपंचमेर्वादिचतुःशतअष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिपंचमेर्वादिचतुःशतअष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिपंचमेर्वादिचतुःशतअष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथ अष्टक-शंभु छंद –

ये जन्म जरा मृति तीन रोग, भव भव से दुख देते आये।
त्रय धारा जल की देकर के मैं पूजूँ ये त्रय नश जायें।।
ये चार शतक अट्ठावन हैं, जिनमंदिर शाश्वत स्वर्णमयी।
इनकी पूजा से जग जाती, निज आतम ज्योती सौख्यमयी।।1।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशतअष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

नानाविध व्याधी रोग शोक, तन में मन में संताप करें।
चंदन से तुम पद चर्चूं मैं, यह पूजा भव भव ताप हरे।।
ये चार शतक अट्ठावन हैं, जिनमंदिर शाश्वत स्वर्णमयी।
इनकी पूजा से जग जाती, निज आतम ज्योती सौख्यमयी।।2।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशतअष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

जग में इन्द्रिय सुख खंड-खंड, नहिं इनसे तृप्ती हो सकती।
अक्षत के पुंज चढ़ाऊँ मैं, अक्षय सुख देगी तुम भक्ती।।

ये चार शतक अट्ठावन हैं, जिनमंदिर शाश्वत स्वर्णमयी।
इनकी पूजा से जग जाती निज आतम ज्योती सौख्यमयी।।3।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशतअष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

इस कामदेव ने भ्रांत किया, निज आत्मिक सुख से भुला दिया।
ये सुरभित सुमन चढ़ाऊँ मैं, निज मनकलिका को खिला लिया।।
ये चार शतक अट्ठावन हैं, जिनमंदिर शाश्वत स्वर्णमयी।
इनकी पूजा से जग जाती, निज आतम ज्योती सौख्यमयी।।4।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशतअष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

उदराग्नी प्रशमन हेतु नाथ, त्रिभुवन के भक्ष्य सभी खाये।
नहिं मिली तृप्ति इसलिए प्रभो! चरु से पूजत हम हर्षाये।।
ये चार शतक अट्ठावन हैं, जिनमंदिर शाश्वत स्वर्णमयी।
इनकी पूजा से जग जाती, निज आतम ज्योती सौख्यमयी।।5।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशतअष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अज्ञान अंधेरा निज घट में, नहिं ज्ञानज्योति खिल पाती है।
दीपक से आरति करते ही, अघ रात्रि शीघ्र भग जाती है।।
ये चार शतक अट्ठावन हैं, जिनमंदिर शाश्वत स्वर्णमयी।
इनकी पूजा से जग जाती, निज आतम ज्योती सौख्यमयी।।6।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशतअष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

वर धूप घटों में धूप खेय, चहुँदिश में सुरभि महकती है।
सब पाप कर्म जल जाते हैं, गुणरत्नन राशि चमकती है।।
ये चार शतक अट्ठावन हैं, जिनमंदिर शाश्वत स्वर्णमयी।
इनकी पूजा से जग जाती, निज आतम ज्योती सौख्यमयी।।7।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशतअष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नानाविध फल की आश लिये, बहुते कुदेव के चरण नमें।
अब सरस मधुर फल से पूजें, बस एक मोक्षफल आश हमें।।
ये चार शतक अट्ठावन हैं, जिनमंदिर शाश्वत स्वर्णमयी।
इनकी पूजा से जग जाती, निज आतम ज्योती सौख्यमयी।।8।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशतअष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंध आदि में चाँदी के, सोने के पुष्प मिला करके।
मैं अर्घ चढ़ाऊँ हे जिनवर! रत्नत्रयनिधि दीजे तुरते।।
ये चार शतक अट्ठावन हैं, जिनमंदिर शाश्वत स्वर्णमयी।
इनकी पूजा से जग जाती, निज आतम ज्योती सौख्यमयी।।9।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशतअष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

शीत सुगंधित नीर से, प्रभुपद धार करंत।
त्रिभुवन में भी शांति हो, आतम सुख विलसंत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

हरसिंगार प्रसून ले, पुष्पांजलि विकिरंत।
मिले सर्वसुख संपदा, परमानंद तुरंत।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

मध्यलोक के अर्घ्य

–दोहा–

मध्यलोक के जिनभवन, अकृत्रिम मुनिवंद्य।
पुष्पांजलि से पूजते, मिटे सकल जगद्वंद।।

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–चौबोल छंद –

पंचमेरु के अस्सी जिनगृह, कर्म विजयि प्रतिमा तिनमें।
पंचम गति के प्राप्त करन को, भावभक्ति से वंदूँ मैं।।
जल गंधादिक द्रव्य मिलाकर, अर्घ्य चढ़ाकर यजन करूँ।
मध्यलोक के शाश्वत जिनगृह, पूजत ही भव ताप हरूँ।।1।।

ॐ ह्रीं पंचमेरुसंबंधि अशीतिजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जंबू शाल्मलि दश वृक्षों की, शाखाओं पर दश मंदिर।
कंतुविजयि जिनकी प्रतिमा को, वंदूँ सदा भाव शुचि कर।।
जल गंधादिक द्रव्य मिलाकर, अर्घ्य चढ़ाकर यजन करूँ।
मध्यलोक के शाश्वत जिनगृह, पूजत ही भव ताप हरूँ।।2।।

ॐ ह्रीं जंबू-शाल्मलि आदिदशवृक्षसंबंधि-दशजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गजदंतगिरी के बीस भवन में, रत्नमयी हैं सिंहासन।
उन पर मारदंति मदहर्ता, जिनबिम्बों को करूँ नमन।।
जल गंधादिक द्रव्य मिलाकर, अर्घ्य चढ़ाकर यजन करूँ।
मध्यलोक के शाश्वत जिनगृह, पूजत ही भव ताप हरूँ।।3।।

ॐ ह्रीं विंशतिगजदंतपर्वतसंबंधि-विंशतिजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुलपर्वत के तीस जिनालय, रत्नमयी प्रतिमा भवहर।
भवभय दुःख हरन के हेतू, करूँ वंदना मन वच कर।।
जल गंधादिक द्रव्य मिलाकर, अर्घ्य चढ़ाकर यजन करूँ।
मध्यलोक के शाश्वत जिनगृह, पूजत ही भव ताप हरूँ।।4।।

ॐ ह्रीं त्रिंशत्कुलाचलसंबंधि-त्रिंशत् जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वक्षारगिरी पर अस्सी जिनभवनों में प्रतिमा राज रहीं।
करूँ वंदना भक्तिभाव से, सुरनर मुनिगण पूज्य कहीं।।

जल गंधादिक द्रव्य मिलाकर, अर्घ्य चढ़ाकर यजन करूँ।
मध्यलोक के शाश्वत जिनगृह, पूजत ही भव ताप हरूँ।।5।।

ॐ ह्रीं अशीतिवक्षारसंबंधि-अशीतिजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रजताचल के इक सौ सत्तर, मदनविजयि जिनराजसदन।
तिन में प्रतिमा नमन करूँ मैं, शतेन्द्र नितप्रति करें नमन।।
जल गंधादिक द्रव्य मिलाकर, अर्घ्य चढ़ाकर यजन करूँ।
मध्यलोक के शाश्वत जिनगृह, पूजत ही भव ताप हरूँ।।6।।

ॐ ह्रीं सप्तत्यधिकशतविजयार्धपर्वतसंबंधि-सप्तत्यधि जिनालयजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इष्वाकार चार पर्वत पर, चार जिनालय में प्रतिमा।
हाथ जोड़कर नमूँ सदा मैं, जिनकी अतुल अकथ महिमा।।
जल गंधादिक द्रव्य मिलाकर, अर्घ्य चढ़ाकर यजन करूँ।
मध्यलोक के शाश्वत जिनगृह, पूजत ही भव ताप हरूँ।।7।।

ॐ ह्रीं चतुःइष्वाकारसंबंधि-चतुर्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मनुजोत्तर नग पर चउदिश में, चार जिनसदन शोभ रहें।
उन पर दतीवैरि विष्टर पर, राजित कृति हम नमन करें।।
जल गंधादिक द्रव्य मिलाकर, अर्घ्य चढ़ाकर यजन करूँ।
मध्यलोक के शाश्वत जिनगृह, पूजत ही भव ताप हरूँ।।8।।

ॐ ह्रीं चतुर्मानुषोत्तरपर्वतसंबंधि-चतुर्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदीश्वरवर द्वीप आठवाँ, बावन श्रीजिनभवन वहाँ।
मणिमय कनक रजतमय मनहर, प्रतिमा वंदूँ शीश नमाँ।।
जल गंधादिक द्रव्य मिलाकर, अर्घ्य चढ़ाकर यजन करूँ।
मध्यलोक के शाश्वत जिनगृह, पूजत ही भव ताप हरूँ।।9।।

ॐ ह्रीं नंदीश्वरद्वीपसंबंधि द्वापंचाशत् जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कुण्डलगिरि के चतुर्दिशा में, चउ जिनगृह शोभा पाते।
कालविजयि के जिनबिम्बों को, वंदन कर भव दुख जाते।।
जल गंधादिक द्रव्य मिलाकर, अर्घ्य चढ़ाकर यजन करूँ।
मध्यलोक के शाश्वत जिनगृह, पूजत ही भव ताप हरूँ।।10।।

ॐ ह्रीं कुण्डलवरद्वीपसंबंधि-चतुर्जिनालय जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

रुचकगिरी के चतुर्दिक चतु-अनंगजयि जिनमंदिर हैं।
विधुतकर्म श्रीजिनबिम्बों को, वंदन भावभक्ति कर है।।
जल गंधादिक द्रव्य मिलाकर, अर्घ्य चढ़ाकर यजन करूँ।
मध्यलोक के शाश्वत जिनगृह, पूजत ही भव ताप हरूँ।।11।।

ॐ ह्रीं रुचकवरद्वीपसंबंधि-चतुर्जिनालय जिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

मध्यलोक के चार शतक, अट्ठावन अकृत्रिम मंदिर।
स्मरविजयि जिनकी आकृतियाँ, वंदूँ मैं मस्तक नत कर।।
शाश्वत जिनगृह जिनप्रतिमा को, पूर्ण अर्घ्य ले यजन करूँ।
भव भव के सब दुःख दूर हो, स्वात्म सुधारस पान करूँ।।1।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधि-चतुःशत-अष्टपंचाशत् जिनालयजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – **ॐ ह्रीं त्रिभुवनतिलकजिनालयजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–शंभु छंद–

जय जय जय मध्यलोक के सब, शाश्वत जिनमंदिर मुनि वंदे।
जय जय जिनप्रतिमा रत्नमयी, भविजन वंदत ही अघ खंडें।।
जय जय जिनमूर्ति अचेतन भी चेतन को वांछित फल देतीं।
जो पूजें ध्यावें भक्ति करें उनकी आतम निधि भर देतीं।।1।।

जय पाँच मेरु के अस्सी हैं, जंबू आदिक तरु के दश हैं।
कुलपर्वत के तीसों जिनगृह, गजदंत गिरी के बीसहिं हैं।।
वक्षार गिरी के अस्सी हैं, इक सौ सत्तर रजताचल के।
दो इष्वाकार जिनालय हैं, चारहिं मंदिर मनुजोत्तर के।।2।।

नंदीश्वर के बावन कुण्डलगिरि रुचकगिरी के चउ चउ हैं।
ये चार शतक अट्ठावन इन, जिनगृह को मेरा वंदन है।।
प्रति जिनगृह में जिनप्रतिमाएँ, सब इक सौ आठ-आठ राजें।
उनचास हजार चार सौ चौंसठ प्रतिमा वंदत अघ भाजें।।3।।

स्वात्मानंदैक परम अमृत, झरने से झरते समरस को।
जो पीते रहते ध्यानी मुनि, वे भी उत्कंठित दर्शन को।।
ये ध्यान धुरंधर ध्यानमूर्ति, यतियों को ध्यान सिखाती हैं।
भव्यों को अतिशय पुण्यमयी, अनवधि पीयूष पिलाती हैं।।4।।

ढाई द्वीपों के मंदिर तक, मानव विद्याधर जाते हैं।
आकाशगमन ऋद्धीधारी, ऋषिगण भी दर्शन पाते हैं।।
आवो आवो हम भी पूजें, ध्यावें वंदें गुणगान करें।
भव भव के संचित कर्मनाश, पूर्णैक 'ज्ञानमति' उदित करें।।5।।

–घत्ता–

जय जय श्रीजिनवर, धर्मकल्पतरु, जय जिनमंदिर सिद्धमही।
जय जय जिनप्रतिमा, सिद्धन उपमा, अनुपम महिमा सौख्यमही।।6।।

ॐ ह्रीं मध्यलोकसंबंधिचतुःशतअष्टपंचाशत्जिनालयजिनबिम्बेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भव्यजन त्रिभुवनतिलक जिनधाम की अर्चा करें।
त्रिभुवन चतुर्गति भ्रमण से, निज की स्वयं रक्षा करें।।
अतिशीघ्र ही त्रिभुवनतिलक निज सिद्धपद को पायेंगे।
निज ज्ञानमति सुख पूर्ण कर, फिर वे यहाँ नहिं आएंगे।।1।।

।। इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 4)

ढाईद्वीपस्थ नवदेवता पूजा

अथ स्थापना (शंभु छंद)

इस मध्यलोक में ढाइद्वीप तक, कर्मभूमियाँ मानी हैं।
सब इक सौ सत्तर भव्यहेतु, ये शिवपथ की रजधानी हैं।
इनमें नवदेव रहें उत्तम, उन सबको पूजूँ भक्ती से।
आह्वानन स्थापन करके, गुणमणि को ध्याऊँ युक्ती से।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं स्थापनं।

अथ अष्टक (नरेन्द्र छंद)

सरयूनदि का शीतल जल ले, जिनपद धार करूँ मैं।
साम्यसुधारस शीतल पीकर, भव भव त्रास हरूँ मैं।।
कर्मभूमि के नवदेवों को, पूजत निजसुख पाऊँ।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग के, सब दुख शीघ्र भगाऊँ।।1।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

काश्मीरी केशर चंदन घिस, जिनपद में चर्चूं मैं।
मानस तनु आगंतुक त्रयविध, ताप हरो अर्चूं मैं।।

कर्मभूमि के नवदेवों को, पूजत निजसुख पाऊँ।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग के, सब दुख शीघ्र भगाऊँ।।2।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मोतीसम उज्ज्वल अक्षत से, प्रभु नव पुंज चढ़ाऊँ।
निजगुणमणि को प्रगटित करके, फेर न भव में आऊँ।।
कर्मभूमि के नवदेवों को, पूजत निजसुख पाऊँ।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग के, सब दुख शीघ्र भगाऊँ।।3।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जुही मोगरा सेवंती, वासंती पुष्प चढ़ाऊँ।
कामदेव को भस्मसात् कर, आतम सौख्य बढ़ाऊँ।।
कर्मभूमि के नवदेवों को, पूजत निजसुख पाऊँ।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग के, सब दुख शीघ्र भगाऊँ।।4।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

घेवर फेनी लड्डू पेड़ा, रसगुल्ला भर थाली।
तुम्हें चढ़ाऊँ क्षुधा नाश हो, भरें मनोरथ खाली।।
कर्मभूमि के नवेदवों को, पूजत निजसुख पाऊँ।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग के, सब दुख शीघ्र भगाऊँ।।5।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णदीप में ज्योति जलाऊँ, करूँ आरती रुचि से।
मोह अंधेरा दूर भगे, सब ज्ञान भारती प्रगटे।।
कर्मभूमि के नवदेवों को, पूजत निजसुख पाऊँ।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग के, सब दुख शीघ्र भगाऊँ।।6।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दशांगी अग्निपात्र में, खेवत उठे सुगंधी।
कर्म जलें सब सौख्य प्रगट हों, फैले सुयश सुगंधी।।
कर्मभूमि के नवदेवों को, पूजत निजसुख पाऊँ।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग के, सब दुख शीघ्र भगाऊँ।।7।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आडू लीची सेब संतरा, आम अनार चढ़ाऊँ।
सरस मधुर फल पाने हेतू, शत-शत शीश झुकाऊँ।।
कर्मभूमि के नवदेवों को, पूजत निजसुख पाऊँ।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग के, सब दुख शीघ्र भगाऊँ।।8।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल गंधादिक अर्घ्य बनाकर, सुवरण पुष्प मिलाऊँ।
भक्तिभाव से गीत नृत्य कर, प्रभु को अर्घ्य चढ़ाऊँ।।
कर्मभूमि के नवदेवों को, पूजत निजसुख पाऊँ।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग के, सब दुख शीघ्र भगाऊँ।।9।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिसप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितअर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–सोरठा–

यमुना सरिता नीर, प्रभु चरणों धारा करूँ।
मिले निजात्म समीर, शांतीधारा शं करे।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सुरभित खिले सरोज, जिनचरणों अर्पण करूँ।
निर्मद करूँ मनोज, पाऊँ निजगुण संपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–दोहा–

पंच परम गुरु धर्म श्रुत, जिनप्रतिमा जिनधाम।
पुष्पांजलि से पूजते, मिले निजातम धाम।।

इति मंडलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–शंभु छंद–

जिनके पांचों कल्याणक में, इन्द्रादि महोत्सव करते हैं।
जो ज्ञान दर्श सुख वीर्यमयी, आनन्त्य चतुष्टय धरते हैं।।
ऐसे अर्हंत अनंत गुणों के, धारी अच्युत परमात्मा।
घाती विरहित केवलज्ञानी, सब जजूँ शुद्ध अर्हंतात्मा।।1।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि सप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितार्हत्परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो शुक्लध्यानमय अग्नी में, आठों कर्मेन्धन भस्म करें।
परमानंदामृत सरवर में, अतिशय निमग्न हो सौख्य भरें।।
कृतकृत्य परम सिद्धात्मा ये, लोकाग्र शिखर पर तिष्ठ रहें।
मैं पूजूँ अर्घ्य चढ़ा करके, मेरे सब कर्म कलंक दहें।।2।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि सप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितसिद्धपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो पंचाचार स्वयं पालें, भव्यों से भी पलवाते हैं।
ये शिवपथ विघ्न विनाश करें, रत्नत्रय से नित पावन हैं।।
जल गंधादिक से पूजूँ मैं, ये मुझको मोक्षमार्ग देवें।
निश्चय व्यवहार रत्नत्रय दें, मुझको भी निज सम कर लेवें।।3।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि सप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थिताचार्यपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो द्वादशांग अरु अंगबाह्य, श्रुत पढ़ते और पढ़ाते हैं।
अष्टांगनिमित्त महाज्ञानी, गुरु उपाध्याय कहलाते हैं।।

इन गुरु के चरण कमल पूजूँ, मुझमें भी ज्ञानज्योति प्रगटे।
ये द्रव्य भावश्रुत पूरे हों, फिर केवलज्ञान ज्योति चमके।।4।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि सप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितोपाध्याय-परमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चारों आराधन आराधें, नित धर्मामृत पीते रहते।
पर्वत वन गुफा कंदरा में, शुद्धात्म ध्यान करते रहते।।
ये साधु स्वात्म सुख साध्य करें, फिर सिद्धिरमा के स्वामी हों।
मैं पूजूँ गुरु के चरण कमल, मेरा मन शिवपथगामी हो।।5।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि सप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितसर्वसाधुपरमेष्ठिभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–शेर छंद–

जो लोक और अलोक के, स्वरूप को कहे।
केवलि प्रणीत धर्म ये, संसार दुख दहे।।
बाजा बजाके भक्ति, गीत नृत्य मैं करूँ।
मंगलमयी जिनधर्म जजूँ, मृत्यु को हरूँ।।6।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि सप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितजिनधर्मेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

द्वादशांग हे वाङ्मय! श्रुतज्ञानामृतसिंधु।
पूजूँ अर्घ्य चढ़ायके, तरूँ शीघ्र भवसिंधु।।7।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि सप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितजिनागमेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

त्रिभुवन में जिनचैत्य हैं, संख्यातीत अनंत।
अकृत्रिम कृत्रिम सभी, जजूँ करूँ भव अन्त।।8।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि सप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितकृत्रिमाकृत्रिम-जिनचैत्येभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

अकृत्रिम कृत्रिम सभी, पूजूँ जिनवर धाम।
मिले स्वात्म कैवल्यपद, जहाँ पूर्ण विश्राम।।9।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि सप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितकृत्रिमाकृत्रिमजिन-चैत्यालयेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य (शंभु छंद)–

अर्हंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु परमेष्ठी हैं।
जिनधर्म, जिनागम, जिनप्रतिमा, जिनमंदिर त्रिभुवन वंदित हैं।।
ये भूत भविष्यत् में अनंत, संप्रति में जितने भी होवें।
उन सबको पूजूँ भक्ती से, मेरा सुख भी अक्षय होवे।।1।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपस्थ भूतभविष्यद्वर्तमानकालसंबंधि-अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – **ॐ ह्रीं त्रिभुवनतिलकजिनालयजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–गीता छंद–

जय जय जिनेश्वर देव, तीर्थंकर प्रभू जिन केवली।
जय सिद्ध परमेष्ठी सकल, गणधर गुरू श्रुतकेवली।।
जय जय गुरू आचार्यवर, उवज्झाय साधूगण मुनी।
जिनधर्म जिनआगम जिनेश्वर, बिंब जिनगृह सुख खनी।।1।।

नवदेवता जयशील हैं, ये कर्मभूमी में रहें।
ये सर्व मंगल लोक में, उत्तम शरणमय हो रहें।।
इनकी करूँ मैं वंदना, कर जोड़ नाऊँ शीश को।
इनकी करूँ मैं अर्चना, शत-शत झुकाऊँ शीश को।।2।।

जिनधर्म में कुछ गुण नहीं, सुर देविगण बलि मांगते।
इस विधि कहें जो मूढ़जन, वे दर्शमोहिनि बांधते।।
जो केवली श्रुत संघ को, जिनधर्म सुर को दोष दें।
वे मोहिनी दर्शन अशुभ को, बांधकर दुख भोगते।।3।।

जिनकेवली को रोग हो, आहार भी लेकर जियें।
श्रुत में कहा है मांस भक्षण, साधुगण निर्लज्ज हैं।।
ये सब असत् अपवाद हैं, हे नाथ! मैं इनसे बचूँ।
सम्यक्त्वनिधि रक्षित करूँ, हे नाथ! भवदुख से बचूँ।।4।।

क्रोधादि अशुभ कषाय का, उद्रेक जब अति तीव्र हो।
चारित्र मोहिनि बंध हो, नहिं चरित धारण शक्ति हो।।
चारित्रमोह अनादि से, हे नाथ! निर्बल कर रहा।
मेरी अनंती आत्मशक्ती, छीन कर दुख दे रहा।।5।।

करके कृपा हे नाथ! अब, चारित्रमोह निवारिये।
चारित्र संयम पूर्ण हो, भवसिंधु से अब तारिये।।
प्रभु आप ही पतवार हो, मुझ नाव भवदधि में फंसी।
अब हाथ का अवलंब दो, ना देर कीजे मैं दुखी।।6।।

इन आठ कर्मों में अधिक, बलवान एकहि कर्म है।
इसके अठाइस भेद हैं, बहु भेद सर्व असंख्य हैं।।
ये मोहिनी ही स्थिती, अनुभागबंध करे सदा।
ये मोहिनी संसार का, है मूल कारण दुःखदा।।7।।

हे नाथ! ऐसी शक्ति दो, मैं सर्व ममता छोड़ दूँ।
निज देह से भी होऊँ निर्मम, सर्व परिग्रह छोड़ दूँ।।
निज आत्म से ममता करूँ, निज आत्म की चर्चा करूँ।
निज आत्म में तल्लीन हो, निज आत्म की अर्चा करूँ।।8।।

ऐसा समय तुरतहिं मिले, निज ध्यान में सुस्थिर बनूँ।
उपसर्ग परिषह हों भले, निज तत्त्व में ही थिर बनूँ।।

निज आत्म अनुभव रस पिऊँ,परमात्म पद की प्राप्ति हो।
निज 'ज्ञानमति' ज्योती दिपे, जो तीनलोक प्रकाशि हो।।9।।

–दोहा–

जब तक नहिं परमात्म पद, तुम पद में मन लीन।
एक घड़ी भी नहिं हटे, बनूँ आत्म लवलीन।।10।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधि सप्तत्यधिकशतकर्मभूमिस्थितार्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुजिनधर्मजिनागमजिनचैत्यचैत्यालयेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भव्यजन त्रिभुवनतिलक जिनधाम की अर्चा करें।
त्रिभुवन चतुर्गति भ्रमण से, निज की स्वयं रक्षा करें।।
अतिशीघ्र ही त्रिभुवनतिलक निज सिद्धपद को पायेंगे।
निज ज्ञानमति सुख पूर्ण कर, फिर वे यहाँ नहिं आएंगे।।1।।

।। इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 5)

व्यंतर देव जिनालय पूजा

–अथ स्थापना-गीता छंद –

व्यंतर सुरों के गेह में जिनधाम शाश्वत स्वर्ण के।
प्रत्येक में जिनबिम्ब इक सौ आठ शाश्वत रत्न के।।
सब असंख्याते जैनमंदिर जैनप्रतिमा को जजूँ।
आह्वानन कर पूजूँ यहाँ निज आत्मसुख संपति भजूँ।।1।।

ॐ ह्रीं व्यंतरदेवभवनभवनपुरआवासस्थितसंख्यातीतजिनालयजिन-बिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं व्यंतरदेवभवनभवनपुरआवासस्थितसंख्यातीतजिनालयजिन-बिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं व्यंतरदेवभवनभवनपुरआवासस्थितसंख्यातीतजिनालयजिन-बिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथ अष्टक –स्रग्विणी छंद –

नीर गंगा नदी का भरा भृंग में।
तीन धारा करूँ नाथ के चर्ण में।।
व्यंतरों के यहाँ जैनमंदिर दिपें।
रत्नमय बिम्ब को पूजते भव खिपे।।1।।

ॐ ह्रीं व्यंतरदेवभवनभवनपुरआवासस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वर्णरस के सदृश गंध सौगंध्य ले।
नाथ के पाद अरविंद चर्चूं भले।।
व्यंतरों के यहाँ जैनमंदिर दिपें।
रत्नमय बिम्ब को पूजते भव खिपे।।2।।

ॐ ह्रीं व्यंतरदेवभवनभवनपुरआवासस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शालि अक्षत धुले थाल भरके लिये।
पुंज से पूजहूँ आत्मसुख के लिये।।
व्यंतरों के यहाँ जैनमंदिर दिपें।
रत्नमय बिम्ब को पूजते भव खिपे।।3।।

ॐ ह्रीं व्यंतरदेवभवनभवनपुरआवासस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

कुंद मंदार चंपा चमेली चुने।
पादपंकज जजूँ इष्ट सुख हों घने।।
व्यंतरों के यहाँ जैनमंदिर दिपें।
रत्नमय बिम्ब को पूजते भव खिपे।।4।।

ॐ ह्रीं व्यंतरदेवभवनभवनपुरआवासस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मालपूआ अंदरसा भरे थाल में।
व्यंजनों से जजूँ तृप्ति हो स्वात्म में।।
व्यंतरों के यहाँ जैनमंदिर दिपें।
रत्नमय बिम्ब को पूजते भव खिपे।।5।।

ॐ ह्रीं व्यंतरदेवभवनभवनपुरआवासस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्योति कर्पूर की ज्वाल आरति करूँ।
मोहतम नाश के दिव्य भारति भरूँ।।
व्यंतरों के यहाँ जैनमंदिर दिपें।
रत्नमय बिम्ब को पूजते भव खिपे।।6।।

ॐ ह्रीं व्यंतरदेवभवनभवनपुरआवासस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप दशगंध खेऊं अगनि पात्र में।
कर्म की भस्म हो नाथ के पास में।।

व्यंतरों के यहाँ जैनमंदिर दिपें।
रत्नमय बिम्ब को पूजते भव खिपे।।7।।

ॐ ह्रीं व्यंतरदेवभवनभवनपुरआवासस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आम्र दाड़िम अनंनास ले थाल में।
आप को पूजते मोक्षफल आप में।।
व्यंतरों के यहाँ जैनमंदिर दिपें।
रत्नमय बिम्ब को पूजते भव खिपे।।8।।

ॐ ह्रीं व्यंतरदेवभवनभवनपुरआवासस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

नीर गंधादि ले अर्घ अर्पण करूँ।
रत्नत्रय हेतु स्वातम समर्पण करूँ।।
व्यंतरों के यहाँ जैनमंदिर दिपें।
रत्नमय बिम्ब को पूजते भव खिपे।।9।।

ॐ ह्रीं व्यंतरदेवभवनभवनपुरआवासस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

—दोहा—

हेमभृंग में स्वच्छ जल, जिनपद धार करंत।
तिहुँजग में हो शांतिसुख, परमानंद भरंत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

चंप चमेली मोगरा, सुरभित हरसिंगार।
पुष्पांजलि अर्पण करत, मिले आत्मसुखसार।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

—सोरठा—

व्यंतर निलय असंख्य, जिनगृह संख्यातीत हैं।
जिनवर बिम्ब असंख्य, पुष्पांजलि से पूजहूँ।।

इति मण्डलस्योपरि रत्नप्रभाखरपंकभागे मध्यलोके सर्वत्र च पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

—शंभु छंद—

किन्नर के दश कुल भेदों में, किंपुरुष व किन्नर हृदयंगम।
सुर रूपपालि किन्नर-किन्नर, आनिंदित मनोरम किन्नरोत्तम।।
रतिप्रिय अरु ज्येष्ठ सुदश इनमें,किंपुरुष व किन्नर अधिपति हैं।
किंपुरुष इंद्र के असंख्यात जिनगृह को मेरा वंदन है।।1।।

ॐ ह्रीं किन्नरदेवेषु किंपुरुषेन्द्रस्य असंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

किन्नर अधिपति के असंख्यात, जिननिलय अकृत्रिम माने हैं।
सामानिक आदि देव के भी, अगणित जिनमंदिर माने हैं।।
इन मंदिर का वंदन पूजन, भावों से करते भविजन हैं।
जिनबिम्ब एक सौ आठ-एक सौ आठ, सभी को वंदन है।।2।।

ॐ ह्रीं किन्नरदेवेषु किन्नरेन्द्रस्य असंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

किंपुरुष सुरों के दशविध में, पुरुष पुरुषोत्तम सत्पुरुषा।
महापुरुष पुरुषप्रभ अतीपुरुष, मरु पुन मरुदेव सु मरुप्रभा।।
सुर यशस्वान् इनमें अधिपति, सत्पुरुष महापुरुष द्वि हैं।
सत्पुरुष इंद्र के असंख्यात, जिनगृह को मेरा वंदन है।।3।।

ॐ ह्रीं किंपुरुषदेवेषु सत्पुरुषेन्द्रस्य असंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महापुरुष इन्द्र के असंख्यात, जिनमंदिर मणिमय शाश्वत हैं।
इन सुर के द्वीप समुद्रों में, आवास भवनपुर भासत हैं।।
इन मंदिर का वंदन पूजन, भावों से करते भविजन हैं।
जिनबिम्ब एक सौ आठ-एक सौ आठ सभी को वंदन है।।4।।

ॐ ह्रीं किंपुरुषदेवेषु महापुरुषेन्द्रस्य असंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देव महोरग के भुजंग अरु, भुजंग शालि सु महातनु हैं।
अतिकाय स्कंधशाली मनहर, अशनीजव तथा महेश्वर हैं।।

गंभीर और प्रियदर्शन ये दशविध में दोय इंद्र माने।
महाकाय और अतिकाय प्रथम के असंख्य जिनगृह पूजूँ मैं।।5।।

ॐ ह्रीं महोरगदेवेषु महाकायेन्द्रस्य असंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिकाय इंद्र के असंख्यात आवास भवनपुर होते हैं।
उन सबमें जिनमंदिर सुंदर जिनप्रतिमा संयुत होते हैं।।
इन मंदिर का वंदन पूजन, भावों से करते भविजन हैं।
जिनबिम्ब एक सौ आठ-एक सौ आठ सभी को वंदन है।।6।।

ॐ ह्रीं महोरगदेवेषु अतिकायेन्द्रस्य असंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधर्व देव के दशवधि में, हाहा हू हू नारद तुंबर।
वासव रु कदंब महास्वर अरु हैं गीतरती गीतरस सुर।।
फिर वज्रवान इनमें अधिपति सुर गीतरती व गीतरस हैं।
सुर इंद्र गीतरति के असंख्य, जिनगृह उनको नित वंदन है।।7।।

ॐ ह्रीं गंधर्वदेवेषु गीतरतिइन्द्रस्य असंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देवेन्द्र गीतरस के असंख्य, जिनभवन अकृत्रिम स्वर्णिम हैं।
गणधर मुनिगण चारण ऋषिगण करते परोक्ष ही वंदन हैं।।
इन मंदिर का वंदन पूजन, प्रत्यक्ष करें भाक्तिक सुर हैं।
जिनबिम्ब एक सौ आठ-एक सौ आठ सभी को वंदन है।।8।।

ॐ ह्रीं गंधर्वदेवेषु गीतरसेन्द्रस्य असंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यक्षों के बारह भेद उन्हीं के माणिभद्र अरु पूर्णभद्र।
शैलभद्र मनोभद्र रु भद्रक सुभद्र यक्ष हैं सर्वभद्र।।
मानुष धनपाल स्वरूपयक्ष यक्षोत्तम मनोहरण सुर हैं।
मणिभद्र पूर्णभद्र इंद्र प्रथम के असंख्य जिनगृह पूजूँ मैं।।9।।

ॐ ह्रीं यक्षदेवेषु माणिभद्रइन्द्रस्य असंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिनधाम अकृत्रिम पूर्णभद्र अधिपति के असंख्यात ही हैं।
आवास भवनपुर सुरगृह में जिनमंदिर असंख्यात ही हैं।।
इन मंदिर की स्तुति करते आतमरसपायी मुनिगण हैं।
जिनबिम्ब एक सौ आठ-एक सौ आठ सभी को वंदन हैं।।10।।

ॐ ह्रीं यक्षदेवेषु पूर्णभद्रइन्द्रस्य असंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राक्षस सुर सात भेद भीम महाभीम विनायक उदक कहें।
राक्षस राक्षस राक्षस व ब्रह्मराक्षस इनमें दो इंद्र रहें।।
देवेन्द्र भीम के असंख्यात आवास भवनपुर भवन भि हैं।
इन सबमें जिनगृह असंख्यात उन सबको मेरा वंदन है।।11।।

ॐ ह्रीं राक्षसदेवेषु भीमेन्द्रस्य असंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राक्षसकुल अधिपति महाभीम, के असंख्यात जिनमंदिर हैं।
निज आत्मध्यान में रत मुनिवर, इनके वंदन में तत्पर हैं।।
जिनमंदिर जिनप्रतिमाओं की हम नितप्रति अर्चा करते हैं।
जिन भक्ती भववारिधि नौका इस पर चढ़ भवदधि तरते हैं।।12।।

ॐ ह्रीं राक्षसदेवेषु महाभीमेन्द्रस्य असंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भूतों के कुल में सात भेद, उनमें स्वरूप प्रतिरूप मुख्य।
भूतोत्तम अरु प्रतिभूत महाभूत रु प्रतिच्छन्न आकाशभूत।।
अधिपति स्वरूप के असंख्यात जिनमंदिर शाश्वत स्वर्णमयी।
उन सबमें जिनप्रतिमा अनुपम सुर वंद्य अकृत्रिम रत्नमयी।।13।।

ॐ ह्रीं भूतदेवेषु स्वरूपेन्द्रस्य असंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रतिरूप इंद्र के असंख्यात, जिनमंदिर शाश्वत अनुपम हैं।
जो पूजें ध्यावें भक्ति करें, वे पावें सुख निधि अनुपम हैं।।

मुनिगण जिनप्रतिमा को ध्याते, निजकर्म कालिमा धोते हैं।
हम पूजें अर्घ्य चढ़ा करके, जिनबिम्ब पुण्यप्रद होते हैं।।14।।

ॐ ह्रीं भूतदेवेषु प्रतिरूपेन्द्रस्य असंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यंतर पिशाच कुल चौदह विध, कूष्मांड यक्ष राक्षस संमोह।
तारक अशुची अरु काल महाकाल शुचि सहतालक सु देह।।
महादेह तूष्णीक रु प्रवचन इनमें दो इंद्र कहाये हैं।
अधिपती काल के असंख्य जिनगृह पूजत पाप नशाये हैं।।15।।

ॐ ह्रीं पिशाचदेवेषु कालइन्द्रस्य असंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर महाकाल के असंख्यात, जिनमंदिर अतुल विभव धारें।
सुरगण पिशाच सम्यग्दृष्टी, पूजें बहु भक्ति हृदय धारें।।
मिथ्यादृष्टी 'कुलदेव' मान करके भी पूजा करते हैं।
हम पूजें जिनप्रतिमाओं को पूजत भवि पातक हरते हैं।।16।।

ॐ ह्रीं पिशाचदेवेषु महाकालेन्द्रस्य असंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य –

इस रत्नप्रभा [1]भू के पहले, खरभाग में भवन भूतसुर के।
ये चौदह सहस कहें पुनि, पंकभाग में भवन राक्षसों के।।
वे सोलह हजार हैं पुनरपि, किन्नर आदिक के गृह भूपर।
इन सबमें जिनगृह जिनप्रतिमा, मैं पूजूँ अंजलि मस्तक धर।।1।।

ॐ ह्रीं अधोलोके भूतराक्षसदेवभवनस्थितत्रिंशत्सहस्रजिनालयजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इन आठ प्रकार व्यंतरों के अगणीत 'भवनपुर[2]' माने हैं।
ये असंख्यात द्वीपों व समुद्रों में स्थित मुनि जाने हैं।।

1. त्रिलोकसार गाथा, 290। 2. त्रिलोकसार गाथा, 294।

इन सबमें असंख्यात जिनगृह सबमें इक शत अठ जिनप्रतिमा।
मैं पूजूँ ध्याऊँ भक्ति करूँ जिनदेव देव की बहु महिमा।।2।।

ॐ ह्रीं अष्टविधव्यंतरदेवभवनपुरस्थितअसंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तालाब व पर्वत वृक्षादिक इन पर व्यंतर 'आवास' बने।
ये मध्यलोक में असंख्यात द्वीपों व समुद्रों तक गिनने।।
इनमें जिनमंदिर असंख्यात मैं अर्घ चढ़ाकर नित पूजूँ।
निज पर का भेद ज्ञान पाकर सब जन्म मरण दुख से छूटूँ।।3।।

ॐ ह्रीं अष्टविधव्यंतरदेवआवासस्थितअसंख्यातजिनालयजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

व्यंतर देवों के निलयों में जिनगृह में जिनप्रतिमा सुंदर।
सब रत्नमयी हैं असंख्यात उन भक्ती भविजन क्षेमंकर।।
मैं बहिरातमता को तजकर अंतर आतम का ध्यान करूँ।
इन पूजा संस्तुति कर करके परमात्म अवस्था प्राप्त करूँ।।4।।

ॐ ह्रीं अष्टविधव्यंतरनिलयस्थितअसंख्यातजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ चैत्यवृक्ष अर्घ्य

(चाल-हे दीन..............)

किन्नर सुरों का चैत्यवृक्ष तरु 'अशोक' है।
इस मूल चउर्दिश में चार-चार बिम्ब हैं।।
पर्यंक आसनों से प्रातिहार्य समेता।
मैं चैत्यवृक्ष बिम्ब नमूँ भाव समेता।।1।।

ॐ ह्रीं किन्नरदेवअशोकचैत्यवृक्षस्थितषोडशजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुर किंपुरुष के 'चंपाद्रुम' चैत्यतरु कहा।
प्रत्येक दिश में चउ चउ जिनबिम्ब युत अहा।।

जिनबिम्ब प्रातिहार्य सहित रत्नमयी हैं।
मैं चैत्यवृक्ष नित्य नमूँ सौख्यमही हैं।।2।।

ॐ ह्रीं किंपुरुषदेवचंपकचैत्यवृक्षस्थितषोडशजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है चैत्यवृक्ष 'नागवृक्ष'[1] महोरगों में।
चारों दिशा में चार चार जैनबिम्ब हैं।।
ये दर्शमात्र से समस्त पाप हरे हैं।
जो वंदना करें वे पुण्यराशि भरे हैं।।3।।

ॐ ह्रीं महोरगदेवनागद्रुमचैत्यवृक्षस्थितषोडशजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गंधर्व देव यहाँ चैत्यतरु 'तुंबरु'।
उनके समस्त बिम्ब की मैं अर्चना करूँ।।
ये देव सात स्वर में नाथ कीर्ति गावते।
जो पूजतें इन्हें वे सर्व सौख्य पावते।।4।।

ॐ ह्रीं गंधर्वदेवतुंबरुचैत्यवृक्षस्थितषोडशजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यक्षेन्द्र के 'न्यग्रोध' चैत्यवृक्ष सोहता।
जिनराजबिम्ब से सुरों का चित्त मोहता।।
जो वंदना करें समस्त रिद्धि धरेंगे।
जो अर्चना करें वे कार्य सिद्ध करेंगे।।5।।

ॐ ह्रीं यक्षदेवन्यग्रोधचैत्यवृक्षस्थितषोडशजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

राक्षस सुरों में 'कंटक' तरु चैत्यवृक्ष है।
उसमें जिनेन्द्रप्रतिमा रत्नाभ स्वच्छ हैं।।
पूजूँ उन्हें रुची से वे रोगशोकहर।
वंदूँ उन्हें सदा ही वे ज्ञानसौख्यकर।।6।।

ॐ ह्रीं राक्षसदेवकंटकतरुचैत्यवृक्षस्थितषोडशजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

'तुलसीतरु' है चैत्यवृक्ष भूतसुरों में।
हैं चार-चार बिम्ब इसके मूल भाग में।।
मैं भक्ति से अनंत बार वंदना करूँ।
निजात्मलब्धि हेतु मात्र प्रार्थना करूँ।।7।।

ॐ ह्रीं भूतदेवतुलसीवृक्षचैत्यवृक्षस्थितषोडशजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

1. नागकेसर।

व्यंतर पिशाच के 'कदंब' चैत्यवृक्ष हैं।
गणधर मुनीश वंदे उन चित्त स्वच्छ हैं।।
शीश को नमाऊँ मैं चरणारविंद में।
व्यंतर उपद्रवादी सब दूर हों क्षण में।।8।।

ॐ ह्रीं पिशाचदेवकदंबतरुचैत्यवृक्षस्थितषोडशजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य-शंभु छंद –

व्यंतर के आठ चैत्यतरु में इकसौ अट्ठाइस जिनप्रतिमा।
ये रत्नमयी शाश्वत अनुपम अठ प्रातिहार्य संयुत प्रतिमा।।
इनकी भक्ती पूजा करते, भव भव के पाप अनंत टले।
दुख रोग शोक दारिद्र नशें, संपूर्ण मनोरथ फलें भले।।1।।

ॐ ह्रीं अष्टविधव्यंतरदेवनिलयसंबंधिअष्टचैत्यवृक्षस्थितअष्टाविंशत्युत्तरशतजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रत्येक जिनेन्द्रबिम्ब सन्मुख, मानस्तंभ एक एक सुंदर।
ये तीन पीठ ऊपर स्थित, परकोटे तीन सहित मनहर।।
घंटा किंकिणि मोतीमाला ध्वज चंवर छत्र से संयुत हैं।
प्रतिदिश में जिनप्रतिमाएँ हैं, मैं उन्हें जजूँ वे सुखप्रद हैं।।2।।

ॐ ह्रीं व्यंतरदेवचैत्यवृक्षस्थितजिनबिम्बसन्मुखएकशतअष्टाविंशतिमानस्तंभसर्वजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – **ॐ ह्रीं त्रिभुवनतिलकजिनालयजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा –

व्यंतर देवों के यहाँ, असंख्यात जिनधाम।
रत्नमयी प्रतिमा वहाँ, कोटी कोटि प्रणाम।।1।।

–गीता छंद –

जैवंत अकृत्रिम जिनालय स्वर्ण चांदी रत्न के।
जैवंत हों जिनबिम्ब मणिमय सौम्यछवि सुर वंदते।।

जैवंत हों सब चैत्यतरु जिनबिम्ब अनुपम रत्न के।
जैवंत मानस्तंभ हों सौ इन्द्र जिनको वंदते।।2।।

व्यंतर सुरों के आठ विध किन्नर दुतिय किंपुरुष हैं।
सुर महोरग गंधर्व यक्ष राक्षस व भूत पिशाच हैं।।
प्रत्येक में दो दो अधिप ये आठ द्वीपों में रहें।
समभूमि में इन इन्द्र के वहं पाँच पाँच नगर कहे।।3।।

द्वीपांजनक में दक्षिणी दिश किंपुरुष अधिपति रहें।
इस द्वीप के उत्तर दिशा में इन्द्र किन्नर नगर हैं।।
पुनि वज्रधातुक द्वीप के दक्षिण अधिप सत्पुरुष हैं।
उत्तर दिशा में महापुरुष अधीश निजपुर बसत हैं।।4।।

सुवर्णद्वीप सुदक्षिणी दिश महाकाय अधीश हैं।
उत्तरदिशी अतिशायि इंद्र बसें जजें जिनईश हैं।।
पुनि मनःशिलक सुद्वीप में सुर गीतरति दक्षिणदिशी।
सुर गीतयश हैं इंद्र रहते वहीं पे उत्तरदिशी।।5।।

वर वज्रद्वीप सुदक्षिणी दिश माणिभद्र अधिप रहें।
उत्तर दिशा में पूर्णभद्र सुरेन्द्र निजपुर में रहें।।
भीमेन्द्र रजत सुद्वीप दक्षिण में रहें जिनभक्त हैं।
उत्तर दिशा में महाभीम अधीश नित निवसंत हैं।।6।।

हिंगुलक द्वीप सुदक्षिणीदिश इंद्र नाम सुरूप हैं।
उत्तर दिशी प्रतिरूप स्वामी के नगर अभिरूप हैं।।
हरितालद्वीप सुदक्षिणी दिश काल इंद्र निवास है।
उत्तर दिशा में महाकाल सुरेन्द्र का अधिवास है[1]।।7।।

व्यंतरनिवास त्रिविध भवनपुर भवन पुनि आवास हैं।
उत्कृष्ट गृह के मध्य कूट सुशोभते स्वर्णाभ हैं।।
ये तीन सौ योजन सुविस्तृत शतक योजन तुंग हैं।
लघुगृहों में इक कोश चौड़े इकबढ़े[2] त्रय तुंग हैं।।8।।

1. इन आठ द्वीपों में निवास का कथन तिलोयपण्णत्ति व त्रिलोकसार में है।
2. 1/3 क्रोश ऊँचे हैं। सिद्धांतसार दीपक, अधिकार 13।

इन कूट ऊपर रत्न चाँदी स्वर्णमय जिनधाम हैं।
प्रतिधाम इक सौ आठ प्रतिमा शाश्वती रत्नाभ हैं।।
झारी कलश दर्पण ध्वजा चामर व्यजन[1] त्रयछत्र हैं।
ठोना ये इक सौ आठ-आठ प्रतेक मंगलद्रव्य हैं।।9।।

जिनभवन में घंटा मृदंगी दुंदुभी वीणा बजें।
सिंहासनों पे जैनप्रतिमा पद्मआसन से दिपें।।
सम्यक्त्वधारी देव अतिशय भक्ति से वंदन करें।
'कुलदेवता हैं' समझ मिथ्यादृष्टि भी प्रणमन करें।।10।।

धन धन्य हैं वे भव्य जो सुरगृह जिनालय वंदते।
धन धन्य उन जीवन सफल वे पाप पर्वत खंडते।।
जिनराज पाद प्रसाद से तब तक हृदय में भक्ति हो।
जब तक न निजपद मिले मुझको रत्नत्रय नहि व्यक्त हो।।11।।

—घत्ता—

जय जय जिनआलय, सर्व सुखालय, व्यंतरसुर के रत्नमयी।
जय ''ज्ञानमती'' मुझ, पूर्ण करो शुभ, हो जाऊँ प्रभु मृत्युजयी।।12।।

ॐ ह्रीं व्यंतरदेवभवन-भवनपुर-आवासस्थितसंख्यातीतजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

—गीता छंद—

जो भव्यजन त्रिभुवनतिलक जिनधाम की अर्चा करें।
त्रिभुवन चतुर्गति भ्रमण से, निज की स्वयं रक्षा करें।।
अतिशीघ्र ही त्रिभुवनतिलक निज सिद्धपद को पायेंगे।
निज ज्ञानमति सुख पूर्ण कर, फिर वे यहाँ नहिं आएंगे।।1।।

।। इत्याशीर्वादः।।

1. पंखा।

(पूजा नं. 6)

ज्योतिष्कदेव जिनालय पूजा

–अथ स्थापना –शंभु छंद –

पृथ्वी से सात शतक नब्बे योजन ऊपर ज्योतिषसुर हैं।
रवि शशि ग्रह नखत और तारे ये पाँच भेद ज्योतिषसुर हैं।।
सबके विमान में जिनमंदिर मणिमय शाश्वत जिनप्रतिमायें।
उनको आह्वानन कर पूजूँ ये मोक्षमार्ग को दिखलायें।।1।।

ॐ ह्रीं ज्योतिष्कदेवविमानस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं ज्योतिष्कदेवविमानस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं ज्योतिष्कदेवविमानस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथ अष्टक –भुजंगप्रयात छंद –

पयोसिंधु का नीर झारी भराऊँ।
प्रभू के चरण तीन धारा कराऊँ।।
रवी चंद्र ग्रह और नक्षत्र तारे।
इन्हों में जिनालय जजूँ भक्ति धारे।।1।।

ॐ ह्रीं ज्योतिष्कदेवविमानस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुगंधीत चंदन घिसा भर कटोरी।
चढ़ाऊँ चरण में कटे कर्म डोरी।।
रवी चंद्र ग्रह और नक्षत्र तारे।
इन्हों में जिनालय जजूँ भक्ति धारे।।2।।

ॐ ह्रीं ज्योतिष्कदेवविमानस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

धुले शालि तंदुल धरूँ पुंज आगे।
मिले आत्म संपति सभी दुःख भागें।।
रवी चंद्र ग्रह और नक्षत्र तारे।
इन्हों में जिनालय जजूँ भक्ति धारे।।3।।

ॐ ह्रीं ज्योतिष्कदेवविमानस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

जुही मोगरा केवड़ा पुष्प लाऊँ।
प्रभू चर्ण में अर्प्य निजसौख्य पाऊँ।।
रवी चंद्र ग्रह और नक्षत्र तारे।
इन्हों में जिनालय जजूँ भक्ति धारे।।4।।

ॐ ह्रीं ज्योतिष्कदेवविमानस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पुआ सेमई खीर लाडू बनाके।
प्रभू को चढ़ाऊँ क्षुधा व्याधि नाशे।।
रवी चंद्र ग्रह और नक्षत्र तारे।
इन्हों में जिनालय जजूँ भक्ति धारे।।5।।

ॐ ह्रीं ज्योतिष्कदेवविमानस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शिखा दीप की जगमगे ध्वांत नाशे।
करूँ आरती ज्ञान की ज्योति भासे।।
रवी चंद्र ग्रह और नक्षत्र तारे।
इन्हों में जिनालय जजूँ भक्ति धारे।।6।।

ॐ ह्रीं ज्योतिष्कदेवविमानस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

अगनि पात्र में धूप खेऊँ सुगंधी।
जलें कर्म फैले सुयश की सुगंधी।।

रवी चंद्र ग्रह और नक्षत्र तारे।
इन्हों में जिनालय जजूँ भक्ति धारे।।7।।

ॐ ह्रीं ज्योतिष्कदेवविमानस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अनंनास अंगूर फल थाल भरके।
चढ़ाऊँ तुम्हें मोक्षफल आश धरके।।
रवी चंद्र ग्रह और नक्षत्र तारे।
इन्हों में जिनालय जजूँ भक्ति धारे।।8।।

ॐ ह्रीं ज्योतिष्कदेवविमानस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

मिला अर्घ में स्वर्ण चांदी कुसुम को।
चढ़ाऊँ तुम्हें आत्मनिधि पूर्ण कर दो।।
रवी चंद्र ग्रह और नक्षत्र तारे।
इन्हों में जिनालय जजूँ भक्ति धारे।।9।।

ॐ ह्रीं ज्योतिष्कदेवविमानस्थितसंख्यातीतजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

हेमभृंग में स्वच्छ जल, जिनपद धार करंत।
तिहुँजग में हो शांतिसुख, परमानंद भरंत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

चंप चमेली मोगरा, सुरभित हरसिंगार।
पुष्पांजलि अर्पण करत, मिले आत्म सुखसार।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–सोरठा–

ज्योतिर्मय जिनधाम, ज्योतिष देवों के यहाँ।
नितप्रति करूँ प्रणाम, पुष्पांजली चढ़ाय के।।

इति मध्यलोके ज्योतिर्विमानस्थानेषु पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–शंभु छंद–

यह शशि विमान है तीन सहस छह सौ बाहत्तर मील कहा।
सब ढाई द्वीप के शशिविमान इक सौ बत्तिस मुनिनाथ कहा।।
ये भ्रमणशील अर्ध गोलक इन समतल मध्य कूट शोभे।
उस पर जिनमंदिर शाश्वत हैं, हम पूजें गुणमणि से शोभें।।1।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिएकशतद्वात्रिंशत्चन्द्रविमानस्थितएतावतजिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भास्कर विमान शशि से छोटे ये जम्बूद्वीप में दो ही हैं।
लवणोदधि में चउ धातकि में बारह कालोदधि ब्यालिस हैं।।
वरपुष्करार्ध में बाहत्तर सब मिलकर इक सौ बत्तिस हैं।
इन सबके मध्य जिनालय हैं उनको पूजूँ वे शिवप्रद हैं।।2।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिएकशतद्वात्रिंशत्सूर्यविमानस्थितएतावतजिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक चंद्र इंद्र के अट्ठासी ग्रह अर्धगोल सम चमक रहे।
ग्यारह हजार छह सौ सोलह ये ढाई द्वीप ग्रह बिम्ब कहे।।
इन ग्रह विमान के मध्य कूट उन पर जिनमंदिर शाश्वत हैं।
इन सब जिनमंदिर को पूजूँ ये जिनप्रतिमा से भासत हैं।।3।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिएकादशसहस्रषट्शतषोडशग्रहविमानस्थितएतावत्जिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक चंद्र इंद्र के अट्ठाइस नक्षत्र अर्ध गोलक सम हैं।
सब ढाई द्वीप में तीन सहस्र छह सौ छियानवे नक्षत्र हैं।।
ये ढाई द्वीप में भ्रमण करें इन सब विमान में जिनगृह हैं।
उन सबको पूजूँ भक्ती से जिनभक्ती अतिशय सुखप्रद हैं।।4।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधित्रयसहस्रषट्शतषण्णवतिनक्षत्रविमानस्थितएतावत्जिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इक चंद्र के छ्यासठ सहस्र नौ सौ पचहत्तर कोड़ाकोड़ी।
तारे हैं सब इक सौ बत्तिस गुणिते जितने कोड़ाकोड़ी।।

अठयासि लाख चालिस हजार सुसात शतक कोड़ाकोड़ी।
ये ढाई द्वीप के ताराओं के जिनगृह जजूँ हाथ जोड़ी।।5।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपसंबंधिअष्टाशीतिलक्षचत्वारिंशत्सहस्रसप्तकोटिकोटि-प्रकीर्णकतारकाविमानस्थितएतावत्‌जिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य –

इन ज्योतिष सुर में चंद्र इन्द्र भास्कर प्रतीन्द्र माने जाते।
ग्रह अट्ठासी नक्षत्र अठाइस शशि के परिकर कहलाते।।
छ्यासठ हजार नव सौ पचहत्तर कोड़ाकोड़ी तारे हैं।
ये एक चंद्र परिवार इसी विध ढाईद्वीप के सारे हैं।।1।।

–दोहा –

ढाई द्वीप में एक सौ बत्तिस चंद्र विमान।
सबके परिकर पूर्ववत्, सबमें जिनवर धाम।।2।।
नमूँ नमूँ कर जोड़कर, शीश नमाकर आज।
प्रतिगृह इक सौ आठ जिनबिम्ब नमूँ सुखकाज।।3।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपद्वयसमुद्रसंबंधिएकशतद्वात्रिंशत्चंद्रविमानएतत्परिवार-विमानस्थितसर्वजिनालयजिनबिम्बेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

स्थिर ज्योतिषसुर जिनालय अर्घ्य

–कुसुमलता छंद –

अचल मानुषोत्तर से आगे, पुष्करार्ध में चंद्रविमान।
प्रथम वलय में इक शत चौवालिस, सब आठ वलय कुल जान।।
चार-चार बढ़ते वलयों में सब मिल बारह सौ चौंसठ।
गमन नहीं करते ये स्थिर सबमें जिनगृह पूजत ठाठ।।
पुष्करवर समुद्र में बत्तिस वलय प्रथम में दूने जान।
अंतिम वलय चंद्र से दूने आगे द्वीप वलय प्रथमान[1]।।

1. वलय प्रथम में।

इस विध बढ़ते बढ़ते असंख्य द्वीप जलधि तक चंद्रविमान।
असंख्यात हैं स्थिर इनके सब जिनधाम जजूँ सुखदान।।युग्म।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वताद्‌बहिरसंख्यातद्वीपसमुद्रपर्यंतस्थिरचंद्रविमानस्थित-असंख्यातजिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।1।।

अचल मानुषोत्तर से बाहर द्वीप समुद्र असंख्यों जान।
एक एक लाख योजन पर एक एक हैं वलय महान्।।
द्वीप जलधि के अंत वलय से आगे प्रथम वलय का मान।
द्विगुण द्विगुण सब सूर्यबिम्ब में जिनवरधाम जजूँ अमलान।।2।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वताद्‌बहिरसंख्यातद्वीपसमुद्रपर्यंतस्थिरसूर्यविमानस्थित-असंख्यातजिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक एक शशि के अट्ठासी अट्ठासी ग्रह संख्यातीत।
असंख्यात द्वीपों तक फैले ज्योतिषपुर विमान अगणीत।।
सबहिं विमान अर्धगोलक सम सबके मध्य अकृत्रिम कूट।
उन पर जिनवर भवन अकृत्रिम पूजत मिले मोह से छूट।।3।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वताद्‌बहिरसंख्यातद्वीपसमुद्रपर्यंतस्थिरअसंख्यातग्रह-विमानस्थितअसंख्यातजिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक एक शशि के अट्ठाइस, अट्ठाईस नक्षत्र बखान।
संख्यातीत द्वीप वारिधि तक फैले ज्योतिर्मयी विमान।।
इनमें ज्योतिषसुर रहते हैं सब विमान में जिनवर धाम।
सम्यग्दृष्टी कर्मक्षयार्थ पूजें मैं भी करूँ प्रणाम।।4।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वताद्‌बहिरसंख्यातद्वीपसमुद्रपर्यंतस्थिरअसंख्यातनक्षत्र-विमानस्थितअसंख्यातजिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

एक चंद्र परिवार प्रकीर्णक ताराओं के कांत विमान।
छ्यासठ हजार नव सौ पचहत्तर कोड़ाकोड़ी परिमाण।।
संख्यातीत चंद्र के संख्यातीतहिं तारागण के बिम्ब।
सब देवों के घर में जिनगृह पूजत नशें कर्म कटुनिंब।।5।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वताद्‌बहिरसंख्यातद्वीपसमुद्रपर्यंतस्थिरअसंख्यात-प्रकीर्णकतारागणविमानस्थितअसंख्यातजिनमंदिरजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यंनिर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य–

चंद्र सूर्य ग्रह नखत तारका, ये सब संख्यातीत प्रमाण।
सबके मध्य जिनालय सुंदर, शाश्वत शोभे महिमावान।।
प्रति जिनगृह में प्रतिमा इक सौ आठ-आठ पद्मासन जान।
सब जिनगृह जिनबिम्ब जजूँ मैं नित-नित नव मंगल सुखदान।।1।।

ॐ ह्रीं मानुषोत्तरपर्वताद्बहिरसंख्यातद्वीपसमुद्रपर्यंतस्थिरअसंख्यातचंद्रर-विग्रहनक्षत्रतारकागणविमानस्थितसर्वसंख्यातीतजिनमंदिरजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – **ॐ ह्रीं त्रिभुवनतिलकजिनालयजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–दोहा–

ज्योतिषदेव विमान के, जिनगृह संख्यातीत।
नमूँ नमूँ कर जोड़ के, बनूँ स्वात्म के मीत।।1।।

–गीता छंद–

जय जय जिनेश्वर धाम जग में, इंद्र सौ से वंद्य हैं।
जय जय जिनेश्वर मूर्तियाँ, चिंतामणी शुभरत्न हैं।।
जय जय गणाधिप साधुगण नित ध्यावते हैं चित्त में।
जय भव्य पंकज बोध भास्कर मूर्तियाँ रविबिम्ब में।।2।।

इस भू से इकतिस लाख साठ हजार मील सुगगन में।
तारा विमान सुशोभते नित घूमते हैं अधर में।।
बत्तीस लाख सुमील ऊपर रवि विमान सदा रहें।
पैंतीस लाख सुबीस सहस सुमील पे चंदा रहें।।3।।

नक्षत्र पैंतिस लाख छत्तिस सहस मीलों पे रहें।
बुध लाख पैंतिस सहस बावन मील पे भ्रमते कहें।।

फिर लाख पैंतिस सहस चौंसठ, मील पे ग्रह शुक्र हैं।
पैंतीस लाख सहस छियत्तर मील पर गुरु बिम्ब हैं।।4।।

मंगल सुपैंतिस लाख अट्ठासी सहस ही मील पे।
शनि ग्रह सुछत्तिस लाख मीलों के उपरि अति उच्च पे।।
चित्राधरा से सात सौ नब्बे से नौ सौ योजनों।
तक एक सौ दस योजनों में ज्योतिषी जग हैं भणों।।5।।

शशि सूर्य ग्रह नक्षत्र तारा के विमानहिं चमकते।
ये अर्धगोलक सम इन्हीं में सुरनगर में सुर बसें।।
सबसे बड़े शशिबिम्ब तारा के विमान लघू रहें।
त्रय सहस इक सौ सयेंतालिस मील कुछ अधिकहिं कहें।।6।

ये बड़े हैं तारा लघू दो सौ पचासहिं मील के।
इनमें बने हैं महल उनमें देवगण रहते सबे।।
ये देव देवी मनुज सम अतिरूपवान् वहाँ रहें।
इनके विमानहिं चमकते दिन रात इनसे बन रहें।।7।।

बस पाँच सौ दश सही अड़तालिस बटे इकसठ[1] कहे।
योजनमहा यह जानिये इनका गमन का क्षेत्र है।।
इसमें गली इक सौ तिरासी सूर्य की मानी गईं।
पंद्रह गली हैं चंद्र की दो पक्ष में विचरें यहीं।।8।।

इन सब विमानहिं मध्य में उत्तुंग स्वर्णिम कूट हैं।
उन पर जिनेश्वर भवन शाश्वत शोभते अति पूत[2] हैं।।
सबमें जिनेश्वर बिम्ब इक सौ आठ-इक सौ आठ हैं।
जो देवगण इनको जजें नित भजें मंगल ठाठ हैं।।9।।

जो नर बहुत विध तप तपें बहु पुण्य संचय भी करें।
सम्यक्त्व निधि नहिं पा सकें वे ही यहाँ पर अवतरें।।
जिन दर्श करके तृप्त हों जातिस्मृती वृष श्रवण से।
जिन पंचकल्याणक महोत्सव देखते अन विभव से।।10।।

---

1. 510 (48/61) महायोजन सर्व ज्योतिषियों का गमनक्षेत्र है। 2. पावन।

सम्यक्त्व लब्धी प्राप्त कर निज में मगन जिनभक्त हों।
भव पंच परिवर्तन मिटा कुछ ही भवों में मुक्त हों।।
सम्यक्त्व निधि अनुपम निधी जिनभक्त ही करते सुलभ।
सुख भोगकर नरतन धरें फिर आत्मनिधि उनको सुलभ।।11।।

धन धन्य है यह शुभ घड़ी धन धन्य जीवन सार्थ है।
जिन अर्चना का शुभ समय आया उदय में आज है।।
जिन वंदना से आज मेरे चित्त की कलियाँ खिलीं।
मैं ''ज्ञानमति'' विकसित करूँ अब रत्नत्रय निधियाँ मिलीं।।12।।

–घत्ता –

जय जय जिनमंदिर, भव्य हितंकर, पूजत त्रिभुवन पूज्य बनें।
जय जय जिनप्रतिमा, जिनगुण महिमा, पूजत ही हो सौख्य घने।।13।।

ॐ ह्रीं चन्द्रसूर्यग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकताराज्योतिष्कदेवविमानस्थितसंख्यातीत-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा, दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद –

जो भव्यजन त्रिभुवनतिलक जिनधाम की अर्चा करें।
त्रिभुवन चतुर्गति भ्रमण से, निज की स्वयं रक्षा करें।।
अतिशीघ्र ही त्रिभुवनतिलक निज सिद्धपद को पायेंगे।
निज ज्ञानमति सुख पूर्ण कर, फिर वे यहाँ नहिं आएंगे।।1।।

।। इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 7)

वैमानिक देव जिनालय पूजा

–अथ स्थापना –शंभु छंद –

ऊर्ध्वलोक में वैमानिक की विमान संख्या मानी है।
चौरासि लाख सत्तानवे, हजार तेइस मानी है।।
इन सबमें एक एक जिनगृह शाश्वत मणिमय सुरवंदित हैं।
इन सबमें इक सौ आठ-आठ जिनप्रतिमा पूजूँ शिवप्रद हैं।।1।।

ॐ ह्रीं ऊर्ध्वलोके वैमानिकदेवविमानस्थितचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रत्रयोविंशतिजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं ऊर्ध्वलोके वैमानिकदेवविमानस्थितचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रत्रयोविंशतिजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं ऊर्ध्वलोके वैमानिकदेवविमानस्थितचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रत्रयोविंशतिजिनालयजिनबिम्बसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं

–अथ अष्टक-गीता छंद –

हे नाथ! मेरी ज्ञानसरिता पूर्ण भर दीजे अबे।
इस हेतु जल से आपके पदकमल पूजूँ मैं अबे।।
वैमानिकों के जिनभवन शाश्वत मणीमय शोभते।
उन पूजते निज आत्मगुण संपति मिले मन मोहते।।1।।

ॐ ह्रीं वैमानिकदेवविमानस्थितचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रत्रयोविंशतिजिनालयजिनबिम्बेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आत्म में संपूर्ण शीतल सलिल धारा पूरिये।
तुम चरणयुगल सरोज में चंदन चढ़ाऊँ इसलिए।।
वैमानिकों के जिनभवन शाश्वत मणीमय शोभते।
उन पूजते निज आत्मगुण संपति मिले मन मोहते।।2।।

ॐ ह्रीं वैमानिकदेवविमानस्थितचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रत्रयोविंशतिजिनालयजिनबिम्बेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय अखंडित सौख्यनिधि भंडार भर दीजे प्रभो!।
इस हेतु अक्षत पुंज से मैं पूजहूँ तुम पद विभो।।
वैमानिकों के जिनभवन शाश्वत मणीमय शोभते।
उन पूजते निज आत्मगुण संपति मिले मन मोहते।।3।।

ॐ ह्रीं वैमानिकदेवविमानस्थितचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रत्रयोविंशति-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मुझ आत्मगुण सौगंध्यसागर पूर्ण भर दीजे प्रभो।
इस हेतु मैं सुरभित सुमन ले पूजहूँ तुम पद विभो।।
वैमानिकों के जिनभवन शाश्वत मणीमय शोभते।
उन पूजते निज आत्मगुण संपति मिले मन मोहते।।4।।

ॐ ह्रीं वैमानिकदेवविमानस्थितचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रत्रयोविंशति-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मेरी प्रभो! परिपूर्ण तृप्ती आत्मसुख पीयूष से।
कीजे अतः नैवेद्य से पूजूँ चरणयुग भक्ति से।।
वैमानिकों के जिनभवन शाश्वत मणीमय शोभते।
उन पूजते निज आत्मगुण संपति मिले मन मोहते।।5।।

ॐ ह्रीं वैमानिकदेवविमानस्थितचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रत्रयोविंशति-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु ज्ञानज्योती मुझ हृदय में पूर्ण भर दीजे अबे।
मैं आरती रुचि से करूँ अज्ञानतम तुरतहिं भगे।।
वैमानिकों के जिनभवन शाश्वत मणीमय शोभते।
उन पूजते निज आत्मगुण संपति मिले मन मोहते।।6।।

ॐ ह्रीं वैमानिकदेवविमानस्थितचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रत्रयोविंशति-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

मुझ आत्मयश सौरभ गगन में व्याप्त कर दीजे प्रभो!
इस हेतु खेऊं धूप मैं कटुकर्म भस्म करो विभो!।।

वैमानिकों के जिनभवन शाश्वत मणीमय शोभते।
उन पूजते निज आत्मगुण संपति मिले मन मोहते।।7।।

ॐ ह्रीं वैमानिकदेवविमानस्थितचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रत्रयोविंशति-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आत्मगुण संपत्ति को अब पूर्ण भर दीजे प्रभो!।
इस हेतु फल को मैं चढ़ाऊँ आपके सन्निध विभो!।।
वैमानिकों के जिनभवन शाश्वत मणीमय शोभते।
उन पूजते निज आत्मगुण संपति मिले मन मोहते।।8।।

ॐ ह्रीं वैमानिकदेवविमानस्थितचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रत्रयोविंशति-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अनमोल गुण निज के अनंते किस विधी से पूर्ण हों।
बस अर्घ अर्पण करत ही सब विघ्नवैरी चूर्ण हों।।
वैमानिकों के जिनभवन शाश्वत मणीमय शोभते।
उन पूजते निज आत्मगुण संपति मिले मन मोहते।।9।।

ॐ ह्रीं वैमानिकदेवविमानस्थितचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रत्रयोविंशति-जिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–दोहा–

जिनवरपद अरविंद में, धारा तीन करंत।
त्रिभुवन में भी शांति हो, निज गुणमणि विलसंत।।10।।

शांतये शांतिधारा।

जिनवरचरण सरोज में, सुरभित कुसुम धरंत।
सुख संतति संपति बढ़े, निज गुणमणि विलसंत।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

–सोरठा–

वैमानिक सुविमान, जिनमंदिर पावन वहाँ।
पूजूँ नित धर ध्यान, पुष्पांजलि अर्पण करूँ।।

इति मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–नरेन्द्र छंद –

पहले ही सौधर्म स्वर्ग में बत्तिस लाख जिनालय।
गणधर मुनिगण सौ इंद्रों से वंदित सर्व सुखालय।।
जो जन इनकी पूजा करते सर्व उपद्रव चूरें।
निज के ज्ञान दरस वीरज सुख परम सुधारस पूरें।।1।।

ॐ ह्रीं सौधर्मकल्पस्थितद्वात्रिंशत्लक्षविमानस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वितीय स्वर्ग ऐशान कल्प में लाख अठाइस जानो।
शाश्वत मणिमय जिनमंदिर हैं वंदन कर भव हानो।।
जो जन इनकी पूजा करते सर्व उपद्रव चूरें।
निज के ज्ञान दरस वीरज सुख परम सुधारस पूरें।।2।।

ॐ ह्रीं ऐशानकल्पस्थितअष्टाविंशतिविमानस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सानत्कुमार स्वर्ग में बारह लाख जिनालय सोहें।
ध्वज किंकिणि घंटा चंद्रोपक आदिक से मन मोहें।।
जो जन इनकी पूजा करते सर्व उपद्रव चूरें।
निज के ज्ञान दरस वीरज सुख परम सुधारस पूरें।।3।।

ॐ ह्रीं सानत्कुमारकल्पस्थितद्वादशलक्षविमानस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चौथे स्वर्ग माहेन्द्रकल्प में आठ लाख जिनधामा।
सुरगण देव अप्सरायें नित गुण गावें अभिरामा।।
जो जन इनकी पूजा करते सर्व उपद्रव चूरें।
निज के ज्ञान दरस वीरज सुख परम सुधारस पूरें।।4।।

ॐ ह्रीं माहेन्द्रकल्पस्थितअष्टलक्षविमानस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ब्रह्म ब्रह्मोत्तर स्वर्ग उभय में चार लाख जिनधामा।
आठ द्रव्य मंगलमय शोभें प्रति जिन पास महाना।।

जो जन इनकी पूजा करते सर्व उपद्रव चूरें।
निज के ज्ञान दरस वीरज सुख परम सुधारस पूरें।।5।।

ॐ ह्रीं ब्रह्मकल्पस्थितचतुर्लक्षविमानस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लांतव अरु कापिष्ठ स्वर्ग में सहस पचास जिनालय।
शाश्वत रत्नमयी जिनप्रतिमा भविजन हेतु शिवालय।।
जो जन इनकी पूजा करते सर्व उपद्रव चूरें।
निज के ज्ञान दरस वीरज सुख परम सुधारस पूरें।।6।।

ॐ ह्रीं लांतवकल्पस्थितपंचाशत्सहस्रविमानस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुक्र महाशुक्र उभय स्वर्ग में चालिस सहस जिनालय।
मणिमय रत्नमयी जिनप्रतिमा वंदत सर्व सुखालय।।
जो जन इनकी पूजा करते सर्व उपद्रव चूरें।
निज के ज्ञान दरस वीरज सुख परम सुधारस पूरें।।7।।

ॐ ह्रीं महाशुक्रकल्पस्थितचत्वारिंशत्सहस्रविमानस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शतार अरु सहस्रार कल्प में छह हजार जिनगेहा।
अभिषेक प्रेक्षागृह नर्तन मंडप मंडित गेहा।।
जो जन इनकी पूजा करते सर्व उपद्रव चूरें।
निज के ज्ञान दरस वीरज सुख परम सुधारस पूरें।।8।।

ॐ ह्रीं सहस्रारकल्पस्थितषट्सहस्रविमानस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आनत प्राणत आरण अच्युत चार कल्प में गिनिये।
सात शतक जिनमंदिर शाश्वत वंदत ही भव हनिये।।
जो जन इनकी पूजा करते सर्व उपद्रव चूरें।
निज के ज्ञान दरस वीरज सुख परम सुधारस पूरें।।9।।

ॐ ह्रीं आनतप्राणतारणाच्युतकल्पस्थितसप्तशतविमानस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तीन अधोग्रैवेयक में जिनगृह इक सौ ग्यारह हैं।
मंगल कलश ध्वजा तोरण से संयुत सुखसागर हैं।।
जो जन इनकी पूजा करते सर्व उपद्रव चूरें।
निज के ज्ञान दरस वीरज सुख परम सुधारस पूरें।।10।।

ॐ ह्रीं त्रयाधोग्रैवेयकस्थितएकशतएकादशविमानस्थितजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मध्यम् ग्रैवेयकत्रय में हैं इक सौ सात जिनालय।
देवच्छंद मध्य जिनप्रतिमा वंदत मिले शिवालय।।
जो जन इनकी पूजा करते सर्व उपद्रव चूरें।
निज के ज्ञान दरस वीरज सुख परम सुधारस पूरें।।11।।

ॐ ह्रीं त्रयमध्यमग्रैवेयकस्थितएकशतसप्तविमानस्थितजिनालयजिन-बिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उपरिमत्रय ग्रैवेयक में जिनमंदिर इक्यानवें हैं।
अहमिन्द्रों से सतत पूज्य हैं मुनिगण भी वंदे हैं।।
जो जन इनकी पूजा करते सर्व उपद्रव चूरें।
निज के ज्ञान दरस वीरज सुख परम सुधारस पूरें।।12।।

ॐ ह्रीं त्रयउपरिमग्रैवेयकस्थितएकनवतिविमानस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नव अनुदिश में नव जिनमंदिर मणिमय बिंब समेता।
सम्यग्दृष्टी अहमिन्द्रों से पूजित पुण्य समेता।।
जो जन इनकी पूजा करते सर्व उपद्रव चूरें।
निज के ज्ञान दरस वीरज सुख परम सुधारस पूरें।।13।।

ॐ ह्रीं नवानुदिशस्थितनवविमानस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पाँच अनुत्तर में जिनमंदिर पाँच अकृत्रिम सोहें।
अहमिन्द्रों से सतत वंद्य ये मुनिगण का मन मोहें।।

जो जन इनकी पूजा करते सर्व उपद्रव चूरें।
निज के ज्ञान दरस वीरज सुख परम सुधारस पूरें।।14।।

ॐ ह्रीं पंचानुत्तरविमानस्थितजिनालयजिनबिम्बेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

–पूर्णार्घ्य –शंभु छंद –

इंद्रक विमान त्रेसठ मानें इनमें जिनमंदिर अविनश्वर।
अड्डत्तर सौ सोलह विमान श्रेणीबद्ध में जिनगृह सुंदर।।
चौरासी लाख नवासि सहस इक सौ चौवालिस प्राकीर्णक।
ये सब चौरासी लाख सत्यानवे सहस सुते इस जिनगृहयुत।।1।।

ॐ ह्रीं ऊर्ध्वलोके त्रिषष्ठिइन्द्रकविमानअष्टसप्ततिशतषोडशश्रेणीबद्धविमान-चतुरशीतिलक्षएकोननवतिसहस्रएकशतचतुश्चत्वारिंशत्प्रकीर्णकविमानस्थित-सर्वचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्रत्रयोविंशतिजिनालयेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ये कोटि इक्यानवे लाख छियत्तर सहस अठत्तर चार शतक।
चौरासी जिनवर प्रतिमाएँ मैं मन वच तन से नमूँ सतत।।
प्रत्येक जिनालय में ये इक सौ आठ-आठ पद्मासन हैं।
इनकी पूजा वंदन भक्ती दे देती सुख परमानंद है।।2।।

ॐ ह्रीं ऊर्ध्वलोके वैमानिकदेवविमानस्थितएकनवतिकोटिषट्सप्ततिलक्ष-अष्टसप्ततिसहस्रचतुःशतचतुरशीतिजिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सब इंद्रों के गृह के आगे न्यग्रोधवृक्ष अतिशय ऊँचे।
पृथिवीकायिक हैं रत्नमयी ये चैत्यवृक्ष अतिशय शोभें।।
प्रत्येक दिशा में एक-एक जिनप्रतिमा रत्नमयी राजें।
इन चैत्यवृक्ष को नित पूजें पूजत ही भव पातक भाजें।।3।।

ॐ ह्रीं प्रत्येकइंद्रभवनसन्मुखस्थितन्यग्रोधचैत्यवृक्षचतुर्दिक्चतुश्च-तुर्जिनप्रतिमाभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – **ॐ ह्रीं त्रिभुवनतिलकजिनालयजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

–शंभु छंद –

जय जय जय तीर्थंकर जिनवर, जय वीतराग सर्वज्ञ प्रभो।
जय जय हितउपदेशी जिनवर, जय परमपिता परमेश्वर भो।।
तुम नाम मंत्र भी अतिशायी, तुम प्रतिमाएँ जन सुखदायी।
जय ऊर्ध्वलोक के जिनमंदिर, जिनप्रतिमाएँ मुनि मन भाईं।।1।।

वैमानिक के कल्पोपपन्न, अरु कल्पातीत भेद दो हैं।
कल्पोपपन्न के बारह विध, बारह ही इंद्र-प्रतीन्द्र कहें।।
सौधर्मकल्प ऐशान तथा सानत्कुमार माहेन्द्र कल्प।
ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर का पंचम, लांतव कापिष्ठ का छठा कल्प।।2।।

सातवाँ कल्प शुक्र महाशुक्र, अष्टम शतार-सहस्रार कल्प।
आनत-प्राणत, आरण-अच्युत, इन चार स्वर्ग के चार कल्प।।
बारह कल्पों के द्विदश इंद्र, द्वादश प्रतीन्द्र जिनभक्त कहें।
सौधर्म इन्द्र सबमें प्रधान, जिन पंचकल्याणक में रत हैं।।3।।

प्रत्येक इन्द्र के सामानिक, त्रायस्त्रिंश लोकपाल होते।
तनुरक्ष पारिषद अरु अनीक, प्राकीर्णक आभियोग्य होते।।
किल्विषक देव सब असंख्यात, परिवार देव माने जाते।
निज-निज इंद्रों की आज्ञा से, सब वैभव सहित चले आते।।4।।

सत्ताइस कोटी अप्सरियाँ, ऐरावत गज पर नृत्य करें।
जब सौधर्मेन्द्र विभव लेकर, चलते विस्मय सब विश्व करे।।
कल्पातीतों में ग्रैवेयक, नव नव अनुदिश पंचानुत्तर।
इनमें सबहीं अहमिन्द्र रहें, नहिं देवी हैं नहिं सुर परिकर।।5।।

जो समकित सहित पुण्य करते, इन इंद्रों का वैभव पाते।
नंदीश्वर मेरु जिनालय के, वंदत करते अति हरषाते।।
जिनवर के पंचकल्याणक में, अतिशायी पुण्य कमाते हैं।
तीर्थंकर की भक्ती करके, इक भव ले शिवपद पाते हैं।।6।।

दक्षिण के इंद्र-इन्द्राणी को, मिलता है यह सौभाग्य अहो।
जो जिनभक्ती में दृढ़ रहते, वे पा लेते निजराज्य अहो।।
जो जिनमुद्रा धारण करके, दृढ़तर चारित्र पालते हैं।
सोलह स्वर्गों के ऊपर में, बस वो ही जन्म धारते हैं।।7।।

ये मध्यलोक में नहिं आते, वहिं से जिनवंदन करते हैं।
निजगृह के जिनचैत्यालय की, पूजा कर आनंद भरते हैं।।
बहुगीत नृत्य संगीत करें, जिनगुण कीर्ती को गा गाके।
निजआत्म तत्त्व से प्रीति करें, जिनसम निज को भी ध्या ध्याके।।8।।

सौधर्म स्वर्ग में दो सागर, कुछ अधिक आयु उत्कृष्ट रहे।
सर्वार्थसिद्धि में तेंतिस ही, सागर आयू जिनराज कहें।।
सौधर्म स्वर्ग में सात हाथ, ऊँचे तनु धारक देव कहें।
सर्वार्थसिद्धि में एक हाथ, तनु के ही सुंदर देव रहें।।9।।

सब इंद्र देव निज औपपाद, शय्या से जन्म ग्रहण करते।
घंटा ध्वनि आदिक से उठकर, क्षण में हि अवधिज्ञानी बनते।।
स्नान आदि से हो पवित्र, जिनमंदिर में पहले जाते।
नाना स्तुति भक्ती वंदन, करते जिनवर को शिर नाते।।10।।

क्षीरोदधि के जल से पूरित, इक सहस आठ सुवरण कलशे।
पंकज से ढ़के इन्हों से सुर, जिनबिम्बों को सु न्हवन करते।।
मर्दल घंटा दुंदुभि वीणा, बहुविध वाद्यों की उच्च ध्वनी।
संगीत गीत नर्तन करते, जिनवर गुण गाते मधुर ध्वनी।।11।।

भृंगार कलश दर्पण चामर, त्रयछत्र आदि बहु द्रव्यों को।
अर्पण करते अठ मंगलमय, शुभ द्रव्य विविध तोरण ध्वज को।।
जल चंदन अक्षत पुष्प चरु, दीपक वरधूप सरस फल से।
जिनपूजा करते हर्ष भरे, अतिशायी भक्ति करें रुचि से।।12।।

मैं भी जिनमंदिर को पूजूँ, वंदूँ ध्याऊँ गुणगान करूँ।
जिनप्रतिमाओं के चरणों में, मैं बारम्बार प्रणाम करूँ।।

प्रभु ऐसी शक्ती दो मुझको, निज आत्मसुधारस पान करूँ।
निज में निज ''ज्ञानमती'' ज्योती, पाकर निज में विश्राम करूँ।।13।।

–दोहा –

जय जय जय श्रीजिनभवन, जिनप्रतिमा मुनिवंद्य।
कोटि कोटि वंदन करूँ, पाऊँ परमानंद।।14।।

ॐ ह्रीं ऊर्ध्वलोकेवैमानिकदेवविमानस्थितचतुरशीतिलक्षसप्तनवतिसहस्र-त्रयोविंशतिजिनालयजिनबिम्बेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद –

जो भव्यजन त्रिभुवनतिलक जिनधाम की अर्चा करें।
त्रिभुवन चतुर्गति भ्रमण से, निज की स्वयं रक्षा करें।।
अतिशीघ्र ही त्रिभुवनतिलक निज सिद्धपद को पायेंगे।
निज ज्ञानमति सुख पूर्ण कर, फिर वे यहाँ नहिं आएंगे।।1।।

।। इत्याशीर्वादः।।

(पूजा नं. 8)

सिद्ध शिला पूजा

–स्थापना (शंभु छंद) –

श्री सिद्धशिला नरलोक मात्र, पैंतालिस लाख सुयोजन है।
त्रैलोक्य शिखर पर अष्टम भू पर, रुक्मी[1] अर्धचंद्र सम है।।
श्री सिद्ध अनंतानंत इसी पर, तिष्ठें अष्ट गुणान्वित हैं।
आह्वानन कर इनको पूजूँ, ये देते सौख्य अपरिमित हैं।।1।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनशिखरस्थितसिद्धशिलोपरिविराजमानअनन्तानन्तसिद्धसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननं।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनशिखरस्थितसिद्धशिलोपरिविराजमानअनन्तानन्तसिद्धसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनं।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनशिखरस्थितसिद्धशिलोपरिविराजमानअनन्तानन्तसिद्धसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधीकरणं।

–अथ अष्टक –शंभु छंद –

श्री सिद्ध सुयशसम उज्जवल जल, लेकर झारी भर लाया हूँ।
निज समरस सुख पाने हेतू, प्रभु चरण चढ़ाने आया हूँ।।
श्री सिद्धशिला को नित पूजूँ, सब सिद्ध अनंतानंत जजूँ।
सर्वार्थसिद्धि को पा करके, इस सिद्धशिला पर शीघ्र बसूँ।।1।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनशिखरस्थितसिद्धशिलोपरिविराजमानअनन्तानन्तसिद्धेभ्यः जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सिद्ध गुणों सम अतिशीतल, चंदन घिसकर ले आया हूँ।
निज की शीतलता पाने को, प्रभु चरण चढ़ाने आया हूँ।।
श्री सिद्धशिला को नित पूजूँ, सब सिद्ध अनंतानंत जजूँ।
सर्वार्थसिद्धि को पा करके, इस सिद्धशिला पर शीघ्र बसूँ।।2।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनशिखरस्थितसिद्धशिलोपरिविराजमानअनन्तानन्तसिद्धेभ्यः चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

---

1. चाँदी की सिद्धशिला है।

श्री सिद्ध सौख्य सम खंडरहित, उज्ज्वल तंदुल ले आया हूँ।
निज आत्म सौख्य पाने हेतू, प्रभु पुंज चढ़ाने आया हूँ।।
श्री सिद्धशिला को नित पूजूँ, सब सिद्ध अनंतानंत जजूँ।
सर्वार्थसिद्धि को पा करके, इस सिद्धशिला पर शीघ्र बसूँ।।3।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनशिखरस्थितसिद्धशिलोपरिविराजमानअनन्तानन्तसिद्धेभ्यः अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सिद्ध गुणों सम अति सुगंध, पुष्पों को चुनकर लाया हूँ।
निज गुण सुगंधि पाने हेतू, प्रभु चरणों पुष्प चढ़ाया हूँ।।
श्री सिद्धशिला को नित पूजूँ, सब सिद्ध अनंतानंत जजूँ।
सर्वार्थसिद्धि को पा करके, इस सिद्धशिला पर शीघ्र बसूँ।।4।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनशिखरस्थितसिद्धशिलोपरिविराजमानअनन्तानन्तसिद्धेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सिद्ध पुष्टि सम नानाविध, पकवान बनाकर लाया हूँ।
निज आत्म तृप्ति पाने हेतू, प्रभु चरण चढ़ाने आया हूँ।।
श्री सिद्धशिला को नित पूजूँ, सब सिद्ध अनंतानंत जजूँ।
सर्वार्थसिद्धि को पा करके, इस सिद्धशिला पर शीघ्र बसूँ।।5।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनशिखरस्थितसिद्धशिलोपरिविराजमानअनन्तानन्तसिद्धेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सिद्ध ज्ञान सम ज्योतिर्मय, कर्पूर जलाकर लाया हूँ।
निज ज्ञानज्योति पाने हेतू, मैं आरति करने आया हूँ।।
श्री सिद्धशिला को नित पूजूँ, सब सिद्ध अनंतानंत जजूँ।
सर्वार्थसिद्धि को पा करके, इस सिद्धशिला पर शीघ्र बसूँ।।6।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनशिखरस्थितसिद्धशिलोपरिविराजमानअनन्तानन्तसिद्धेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सिद्ध गुणों की सुरभि सदृश, वर धूप सुगंधित लाया हूँ।
निज आत्मसुरभि पाने हेतू, अग्नी में धूप जलाया हूँ।।

श्री सिद्धशिला को नित पूजूँ, सब सिद्ध अनंतानंत जजूँ।
सर्वार्थसिद्धि को पा करके, इस सिद्धशिला पर शीघ्र बसूँ।।7।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनशिखरस्थितसिद्धशिलोपरिविराजमानअनन्तानन्तसिद्धेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सिद्ध सुखामृत सदृश मधुर, रस भरे बहुत फल लाया हूँ।
निज मोक्ष सुफल हेतू भगवन्! फल आज चढ़ाने आया हूँ।।
श्री सिद्धशिला को नित पूजूँ, सब सिद्ध अनंतानंत जजूँ।
सर्वार्थसिद्धि को पा करके, इस सिद्धशिला पर शीघ्र बसूँ।।8।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनशिखरस्थितसिद्धशिलोपरिविराजमानअनन्तानन्तसिद्धेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री सिद्ध गुणों के सम अनर्घ, यह अर्घ सजाकर लाया हूँ।
निज तीन रत्न पाने हेतू, प्रभु चरण चढ़ाने आया हूँ।।
श्री सिद्धशिला को नित पूजूँ, सब सिद्ध अनंतानंत जजूँ।
सर्वार्थसिद्धि को पा करके, इस सिद्धशिला पर शीघ्र बसूँ।।9।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनशिखरस्थितसिद्धशिलोपरिविराजमानअनन्तानन्तसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

—सोरठा—

सिद्धशिला पर आज, मन से जलधारा करूँ।
पूर्ण शांति साम्राज्य, मिले त्रिजग में शांति हो।।10।।

शांतये शांतिधारा।

सिद्धशिला पर आज, पुष्पांजलि मन से करूँ।
मिले सिद्धि साम्राज्य, त्रिभुवन की सुख संपदा।।11।।

दिव्य पुष्पांजलिः।

अथ प्रत्येक अर्घ्य

—दोहा—

सिद्धशिला को पूजते, सर्व कार्य हों सिद्ध।
पुष्पांजलि कर पूजते, हों प्रसन्न सब सिद्ध।।

अथ मण्डलस्योपरि पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

–शंभु छंद –

इस जंबूद्वीप में सात क्षेत्र में, कर्म भोगभू आदिक हैं।
निज इच्छा से उपसर्गादिक से, सिद्ध हुए मुनि आदिक हैं।।
जिस स्थल से निर्वाण गये, बस वहीं शिला पर पहुँच गये।
उन सब सिद्धों को पूजूँ मैं, मेरे सब वांछित सिद्ध भये।।1।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधिकर्मभूमिभोगभूमिआदिस्थलेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्व-सिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस द्वीप में सत्रह लाख बानवे हजार नब्बे नदियाँ हैं।
ये शाश्वत हैं कृत्रिम उपसागर, सरवर आदिक नदियाँ हैं।।
इन नदियों से उपसर्ग आदि में, बहुत मुनीश्वर मुक्त हुए।
उन सब सिद्धों को पूजूँ मैं, मेरे सब इच्छित पूर्ण हुए।।2।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधिअकृत्रिमनदीकृत्रिमउपसागरनदीसरोवरतडागादि-जलस्थानेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस जंबूद्वीप में मेरु आदि, त्रय शत ग्यारह पर्वत मानो।
ये शाश्वत हैं कृत्रिम बहुते, सम्मेदशिखर आदिक जानो।।
इनसे इन मध्य गुफाओं से, मेरू की मध्य गुफा से भी।
वृक्षादिक से जो सिद्ध हुए, इन नभ सिद्धों को जजूँ अभी।।3।।

ॐ ह्रीं जम्बूद्वीपसंबंधिसुमेर्वादिपर्वतसम्मेदशिखरादिपर्वतेभ्यः सिद्धपदप्राप्त-सर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लवणोदधि से लंकादि द्वीप, कूभोगभूमि बहु स्थल हैं।
वहाँ से जो मुनिवर मुक्त हुए, उपसर्ग व इच्छा के वश हैं।।
इन सब सिद्धों को पूजूँ नित, ये भव दुःख हरने वाले हैं।
ये स्थलसिद्ध अनंते हैं, ये सब सुख करने वाले हैं।।4।।

ॐ ह्रीं लवणोदधिसंबंधिलंकादिद्वीपकुभोगभूमिआदिस्थलेभ्यः सिद्धपदप्राप्त-सर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वीपों के नदी सरोवर से, लवणोदधि के जल ऊपर से।
उपसर्ग आदि के कारण से, बहुते मुनिवर शिवपुर पहुँचे।।

इन सब सिद्धों को पूजूँ नित, परमानन्दांबुधि में न्हावें।
ये जल से सिद्ध अनंतें हैं, इनको वंदत निज सुख पावें।।5।।

ॐ ह्रीं लवणोदधिसंबंधिलंकादिद्वीपमध्यस्थितनदीसरोवरकूपतडागादिजल-समुद्रजलस्थानेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

लवणोदधि मध्य हंस आदी, लंकादि द्वीप में पर्वत हैं।
इन पर से सिद्ध हुए जो मुनि, उपसर्ग आदि के कारण हैं।।
लवणोदधि वेदी ऊपर से, या वहीं अन्य वृक्षादी से।
जो सिद्ध हुए उनको पूजूँ, जिससे निजात्म शक्ती प्रगटे।।6।।

ॐ ह्रीं लवणोदधिसंबंधिलंकादिद्वीपस्थितत्रिकूटाचलादिपर्वतेभ्यः सिद्धपद-प्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वरद्वीप धातकी खण्ड द्वितिय में, कर्मभूमि अरु भोगभूमि।
वन उपवन की भूआदि स्थल से, सिद्ध हुए पावनभूमी।।
तीर्थंकरगण मुनिगण बहुते, सब कर्म काटकर मुक्त हुए।
उपसर्ग आदि से सब थल से, उन पूजत सौख्य अनंत लिये।।7।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधिकर्मभूमिभोगभूमिआदिस्थलेभ्यः सिद्धपद-प्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस द्वीप धातकी में कृत्रिम, अकृत्रिम अगणित नदियाँ हैं।
सब आर्यखंड में उपसागर, सरवर कूपादिक नदियाँ हैं।।
इन सबके जल के ऊपर से, बहुतेक साधुगण मुक्ति गये।
चारण ऋद्धीधर या उपसर्ग, आदि से हम उन जजत भये।।8।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधिकृत्रिमाकृत्रिमनदीउपसागरकूपतडागादि-जलस्थानेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस धातकि में दो मेरु अन्य, अगणित पर्वत कूटादिक हैं।
धात्री तरु शाल्मलितरु आदी बहुविध उपवनतरु आदिक हैं।।
इन नभस्थान से सिद्ध हुए, ऋद्धीबल उपसर्गादिक से।
उन सब सिद्धों को पूजूँ मैं, आतमनिधि मिल जावे जिससे।।9।।

ॐ ह्रीं धातकीखण्डद्वीपसंबंधिमेर्वादिपर्वतकृत्रिमपर्वतकृत्रिमअकृत्रिम-वृक्षादिनभस्थानेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कालोदधि मध्य कुभोगभूमि से, मागध आदि द्वीप थल से।
चारणऋषि या उपसर्ग आदि, कारण से मुनि शिवपुर पहुँचे।।
वर द्वीप जलधि के वेदी के, थल से भी जो मुनि सिद्ध हुए।
उन सब सिद्धों को पूजूँ मैं, ये मेरे सिद्धि निमित्त हुए।।10।।

ॐ ह्रीं कालोदधिसंबंधिकुभोगभूमिआदिस्थलेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कालोदधि के जल से कुभोगभूमी के नदी सरोवर से।
चारण ऋषि मुनि या उपसर्गादिक, से मुनिगण शिवपुर पहुँचे।।
इन जल से मुक्ति प्राप्त मुनि को, मैं नितप्रति शीश झुकाता हूँ।
इन सब सिद्धों को अर्घ चढ़ाकर, शिव की आश लगाता हूँ।।11।।

ॐ ह्रीं कालोदधिसंबंधिकुभोगभूमिआदिमध्यस्थितनदीसरोवरजल-समुद्रजलेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस सागर मध्य कुभोगभूमि, मागध सुर आदि निवास बनें।
उनमें जो पर्वत कूट शिखर तरु, आदि नभस्थल हों जितने।।
उन पर से जो मुनि सिद्ध हुए, उन सबको वंदन करता हूँ।
सब इष्ट वियोग अनिष्ट योग, टल जावे अर्चन करता हूँ।।12।।

ॐ ह्रीं कालोदधिसंबंधिकुभोगभूमिमागधद्वीपादिमध्यस्थितपर्वतकूटवृक्षादि-स्थानेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्करवर द्वीप मध्य वलयाकृति, मनुजोत्तर पर्वत सोहे।
इस परे मनुष नहिं जा सकते, इस तक नरलोक चित्त मोहे।।
इसमें जो कर्मभूमि अरु भोगभूमि वन उपवन स्थल हैं।
उन सबसे सिद्ध हुए जिनवर, मुनिगण उन सबको वंदन है।।13।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधिकर्मभूमिभोगभूमिवनउपवनवेदिकादिस्थलेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस पुष्करार्ध में गंगादिक, अगणित अकृत्रिम नदियाँ हैं।
कृत्रिम सरवर कूपादि तथा, उपसागर आदिक नदियाँ हैं।।

इन जल से चारण बल से या, उपसर्ग आदि से सिद्ध हुए।
उन सबको पूजूँ अर्घ्य चढ़ा, मेरे सब मनरथ सफल हुए।।14।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधिकृत्रिमअकृत्रिमनदीसरोवरउपसागरकूपतडागादि-जलेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

इस पुष्करार्ध में दो मेरू हिमवन आदिक बहुपर्वत हैं।
शाश्वत पर्वत कृत्रिम पर्वत, इन गुफा कंदरा आदिक हैं।।
इन ऊपर से मुनि सिद्ध हुए, पुष्कर शाल्मलि तरु आदिक से।
इन सब सिद्धों को पूजूँ मैं, रत्नत्रय निधी मिले जिससे।।15।।

ॐ ह्रीं पुष्करार्धद्वीपसंबंधिमेर्वादिअकृत्रिमकृत्रिमपर्वततन्मध्यगुहादिवृक्षादि-स्थानेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

यह सिद्धशिला पैंतालिस लाख, सुयोजन मनुज लोक प्रम है।
सर्वत्र अनंतानंत सिद्ध से, भरी अकृत्रिम अनुपम है।।
गणधर मुनिगण से वंद्य शिला, इसको मेरा शत शत वंदन।
यह सिद्धशिला न मिले जब तक, तब तक इसको शत शत वंदन।।16।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनशिखरस्थितपंचचत्वारिंशल्लक्षयोजनप्रमाणसिद्धशिलायै अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

– पूर्णार्घ्य –

इन ढाई द्वीप दो सागर तक, पैंतालिस लाख सुयोजन है।
यह मनुज लोक इसमें ही मानव, मुक्ति प्राप्त कर सकते हैं।।
इसमें थल जल पर्वत चोटी, आदिक सब थल से सिद्ध हुए।
अणुमात्र जगह नहिं रिक्त यहाँ, सब सिद्धों को मैं धरूँ हिये।।1।।

ॐ ह्रीं सार्धद्वयद्वीपद्विसमुद्रप्रमितमनुष्यलोकस्थितसर्वजलस्थलपर्वतवृक्ष-गुहादिस्थानेभ्यः सिद्धपदप्राप्तसर्वसिद्धेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

जाप्य – **ॐ ह्रीं त्रिभुवनतिलकजिनालयजिनबिम्बेभ्यो नमः।**

जयमाला

(चाल-शेर)

जय जय त्रिलोक शिखर अग्र सिद्धशिला है।
जय जय त्रिलोक शिखर अग्र मोक्ष इला है।।
जय जय अनंतानंत सिद्ध इसपे राजते।
जय जय त्रिकाल सिद्ध अनंत गुण से भासते।।1।।

सर्वार्थसिद्धि इंद्रक के ध्वजादंड से।
बारह सुयोजनोपरि भू आठवीं लसे।।
यह पूर्व अपर दिश में सुएक राजु है।
उत्तर दखिन में कुछ कम यह सात राजु है।।2।।

योजन सुआठ मोटी वायूवलय घिरी।
घनउदधी घनवायु तनूवायु से घिरी।।
इस मध्य 'ईषत्प्राग्भार' नाम क्षेत्र है।
चांदी सुवर्ण रत्नपूर्ण सिद्धक्षेत्र है।।3।।

उत्तान धवल छत्र सदृश सिद्धशिला ये।
योजन सुपैंतालीस लाख सिद्धशिला ये।।
ये आठ योजन मध्य में फिर अंत तक घटती।
नरलोक के प्रमाण है इस क्षेत्र की परिधी[1]।।4।।

वह अर्ध चंद्रसम त्रिलोक अग्रभाग में।
अनंत अनंत सिद्ध वहाँ राजते निज में।।
तीर्थेश होके सिद्ध अनंते वहाँ तिष्ठें।
तीर्थेश बिना सिद्ध अनंतानंत वहाँ पे।।5।।

जल थल व गगन से अनंत सिद्ध हुए हैं।
सामान्यकेवलि अंतकृत केवलि भि सिद्ध हैं।।
उत्कृष्ट पाँच सौ पचीस धनु शरीर से।
जघन्य साढ़े तीन हाथ देह मात्र से।।6।।

1. तिलोयपण्णत्ति, अधिकार आठवाँ, गाथा 652 से।

मध्यम अनेक विधि की अवगाहना धरें।
ये सिद्ध हुए हम उन्हों को चित्त में धरें।।
जो ऊर्ध्व लोक अधोलोक तिर्यक् लोक से।
सब कर्म नाश सिद्ध हुए मर्त्यलोक से।।7।।

उत्सर्पिणी अवसर्पिणी के छहों काल से।
उपसर्ग निमित सिद्ध हुए नमूँ भाल से।।
उपसर्ग बिना सिद्ध चौथे काल से हुए।
इन पाँच भरत पाँच ऐरावत से शिव गये।।8।।

दो ज्ञान त्रय व चार से कैवल्य पायके।
जो सिद्ध हुए हैं अनंत सौख्य पायके।।
जो साधु संहरण से सिद्ध हो गये यहाँ।
बिन संहरण अनंत सिद्ध हो रहे यहाँ।।9।।

कुछ साधु समुद्घात करके सिद्ध हुए हैं।
कुछ केवली बिन समुद्घात सिद्ध हुए हैं।।
खड्गासनों से सिद्ध भी अनंत हुए हैं।
पद्मासनों से भी अनंत सिद्ध हुए हैं।।10।।

सब द्रव्य से पुंवेदी ही सिद्ध हुए हैं।
हाँ भाव से त्रय वेद से भी सिद्ध हुए हैं।।
प्रत्येक बुद्ध स्वयंबुद्ध सिद्ध हुए हैं।
बोधित प्रबुद्ध भी अनंत सिद्ध हुए हैं।।11।।

सब आठ कर्म नाश करके सिद्ध हुए हैं।
वे इक सौ अड़तालीस प्रकृति नष्ट किए हैं।।
सब सिद्ध अंतिम देह से कुछ न्यून कहे हैं।
इस विध से अन्त्यदेह के आकार रहे हैं।।12।।

ये सर्व सिद्ध गुण अनंतानंत धारते।
ये सर्व सिद्ध सुख अनंतानंत धारते।।

ये सर्व सिद्ध जन्म मरण शून्य हो गये।
ये सर्व सिद्ध ज्ञान गुण से पूर्ण हो गये।।13।।

इन ढाई द्वीप से अनंत सिद्ध हुए हैं।
दो ही समुद्र से अनंत सिद्ध हुए हैं।।
नरलोक में सब एक सौ सत्तर हैं कर्मभू।
इनमें जनम के प्राप्त करें मनुज मुक्तिभू।।14।।

नरलोक में अणुमात्र भी ना रिक्त थान है।
जहाँ से न हुए सिद्ध सब निर्वाण स्थान हैं।।
मेरू की चूलिका से भी सिद्ध हुए हैं।
वे मेरु की गुफा से ही सिद्ध हुए हैं।।15।।

अनंतानंत सिद्धों की वंदना करूँ।
मैं नित अनंतानंत बार वंदना करूँ।।
श्री सिद्धशिला को नमूँ मैं भक्ति भाव से।
यह सिद्धशिला प्राप्त करूँ भक्ति नाव से।।16।।

–दोहा–

नमूँ सिद्ध परमात्मा, सिद्धशिला मुनिवंद्य।
''ज्ञानमती'' गुण पूर्ण कर, पाऊँ परमानन्द।।17।।

ॐ ह्रीं त्रिभुवनशिखरस्थितसिद्धशिलोपरिविराजमानअनन्तानन्तसिद्धेभ्यः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शांतये शांतिधारा। दिव्य पुष्पांजलिः।

–गीता छंद–

जो भव्यजन त्रिभुवनतिलक जिनधाम की अर्चा करें।
त्रिभुवन चतुर्गति भ्रमण से, निज की स्वयं रक्षा करें।।
अतिशीघ्र ही त्रिभुवनतिलक निज सिद्धपद को पायेंगे।
निज ज्ञानमति सुख पूर्ण कर, फिर वे यहाँ नहिं आएंगे।।1।।

।। इत्याशीर्वादः।।

प्रशस्ति

–दोहा–

शांतिनाथ तीर्थेश को, नमूँ नमूँ शत बार।
कुंथुनाथ अरनाथ को, प्रणमूँ बारम्बार।।1।।

ये तीनों ही तीर्थकर, तीन-तीन पद ईश।
तीर्थंकर चक्री मदन, धारी त्रिभुवन ईश।।2।।

तीन लोक रचना बनी, हस्तिनापुर में नव्य।
इनकी जिनप्रतिमा नमूँ, जिन्हें नमत नित भव्य।।3।।

फाल्गुन वदि एकादशी, प्रथम देशना पर्व।
ऋषभदेव कैवल्य को, पूजें भविजन सर्व।।4।।

वीर संवत् पच्चीस सौ, छत्तिस अतिशयकार।
त्रिभुवनतिलक विधान लघु, किया संकलन सार।।5।।

पंचकल्याणक होयगा, महामहोत्सव हेतु।
फाल्गुन वदि तेरस तिथी, झण्डारोहण श्रेष्ठ।।6।।

शांति कुंथु अरनाथ की, प्रतिमा महाविशाल।
महामस्तकाभिषेक से, होंगे भक्त निहाल।।7।।

महावीर शासन जयतु, मूलसंघ प्राधान्य।
परम्परागत सूरिगण, नमूँ नमूँ जगमान्य।।8।।

सदी बीसवीं के प्रथम, शांतिसागराचार्य।
उनके पट्टाधीश थे, वीरसागराचार्य।।9।।

उनकी शिष्या मैं प्रथित, ग्रंथ रचे बहुतेक।
गणिनी ज्ञानमती लिखित, पूजा ग्रंथ अनेक।।10।।

जब तक जिनशासन यहाँ, जग में है हितकार।
तब तक ज्ञानमती लिखित, हो विधान सुखकार।।11।।

आरती तीन लोक विधान की

रचयित्री-प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चंदनामती

तर्ज-तन डोले.......(नागिन धुन)

जय तीन लोक के जिनबिम्बों की मंगल दीपप्रजाल के,
मैं आज उतारूँ आरतिया।।

जिनबिम्बों के दर्शन से, सम्यग्दर्शन मिलता है।
घृतदीपक से आरति करके, मोहतिमिर भगता है।।
प्रभू जी मोह......
जिनमंदिर की, जिनप्रतिमा की, शुभ मंगल दीप प्रजाल के,
मैं आज उतारूँ आरतिया।।1।।

वसु कोटि सुछप्पन लाख सतानवे, सहस चार सात इक्यासी।
तीन लोक के ये जिन मंदिर, शाश्वत हैं अविनाशी।।
प्रभू जी शाश्वत......
उन जिनमंदिर जिनप्रतिमा की, शुभ मंगल दीप प्रजाल के,
मैं आज उतारूँ आरतिया।।2।।

गणिनी ज्ञानमती माता की, मिली प्रेरणा प्यारी।
हस्तिनापुर में तीन लोक की, रचना बनी है न्यारी।।
प्रभू जी रचना......
उसमें राजे सब जिनबिम्बों की, शुभ मंगल दीप प्रजाल के,
मैं आज उतारूँ आरतिया।।3।।

अधोलोक से सिद्धशिला तक, जितने भी मंदिर हैं।
उन सबकी ''चंदनामती'', स्वर्णिम छवि सुन्दर है।।
प्रभू जी स्वर्णिम......
उन जिनमंदिर जिनप्रतिमा की, शुभ मंगल दीप प्रजाल के,
मैं आज उतारूँ आरतिया।।4।।

भजन

तर्ज - मेरी तो पतंग उड़ गई रे....................

तीन लोक यात्रा करो, सिद्धशिला तक भी चलो,
सिद्ध प्रभु का दर्शन मिलेगा, आत्मतत्व का कमल खिलेगा।।टेक.।।

जम्बूद्वीप हस्तिनापुरी में।
रचनाएँ मनोहर बनी हैं।।
तीन लोक भी बना है सुन्दर।
जिसमें बने हैं महल व मंदिर।।
देखो जरा ठीक से, रचना को नजदीक से,
ज्ञानदीप मन में तब जलेगा, आत्मतत्त्व का कमल खिलेगा।।1।।

सात नरक अधोलोक में हैं।
जहाँ मात्र दुख ही अनंते हैं।।
जिनभवन भी हैं प्रथम धरा में।
खर व पंक भाग दिख रहा है।।
पाप ना कमाना कभी, नरक में न जाना कभी,
अशुभ कर्म तब नहीं बंधेगा, आत्मतत्त्व का कमल खिलेगा।।2।।

मध्यलोक जिनवरों का दर्शन।
करो ऊर्ध्वलोक का भी वंदन।।
सिद्धशिला अर्धचन्द्र सम है।
वहाँ राजे सिद्धों को नमन है।।
''चन्दनामती'' चलो, सीढ़ियाँ चढ़े चलो,
दर्श सिद्ध प्रभु का अब मिलेगा, आत्मतत्त्व का कमल खिलेगा।।3।।